चन्दामामा
माँ – बच्चों का मासिक पत्र
JAN
CHANDAMAMA

Chandamama, January, 1950

Photo by B. Ranganadhan

मैं झाड़ू देती हूँ!

चन्दामामा

विषय सूची

फ़क़ीर की बुद्धिमानी ... ६
सिपाही की बहादुरी ... ८
छाते और जूते की कहानी . १०
वर्धमान की विचित्र यात्रा . १३
सदाव्रत का प्रभाव ... २१
राजा भोज ... २५
वनकुमारी ... २९
भोले-भाले पण्डितजी ... ३४
ऋण का बोझ ... ३७
बगुला और बन्दर ... ४६
बच्चों की देख-भाल ... ४८
भानुमती की पिटारी ... ५०
अङ्कों के तमाशे ... ५४

इनके अलावा, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रंगीले चित्र, और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं।

लेखकों के लिए

एक सूचना

★

चन्दामामा में बच्चों की कहानियाँ, लेख, कविताएँ वगैरह प्रकाशित होती हैं। सभी रचनाएँ बच्चों के लायक सरल भाषा में होनी चाहिए। सुन्दर और मौलिक कहानियों को प्रधानता दी जाएगी। अगर कोई अपनी अमुद्रित रचनाएँ वापस मँगाना चाहें तो उन्हें अपने लेख के साथ पूरा पता लिखा हुआ लिफ़ाफ़ा स्टांप लगा कर भेजना होगा। नहीं तो किसी हालत में लेख लौटाए नहीं जा सकते। पत्र-व्यवहार करने से कोई लाभ न होगा। अनावश्यक पत्र-व्यवहार करने से समय की क्षति होती है और हमारे आवश्यक कार्य-कलाप में बाधा पहुँचती है। कुछ लोग रचनाएँ भेज कर तुरंत पत्रों पर पत्र लिखने लगते हैं। उतावली करने से कोई फ़ायदा नहीं। आशा है, हमारे लेखक इन बातों को ध्यान में रख कर हमारी सहायता करेंगे।

★

—: कार्यालय :—

३७, आचारप्पन स्ट्रीट, मद्रास—१.

चार भाषाओं में चन्दामामा

माँ-बच्चों के लिए एक सचित्र मासिक पत्र

मीठी कहानियाँ, मनोरंजक व्यंग्य-चित्र, सुन्दर कविताएँ, पहेलियाँ और तरह तरह के लेख।

हिन्दी

तेलुगू

तमिल

कन्नड

भाषाओं में प्रकाशित होता है।

एक प्रति का दाम ।≈)

एक साल का चन्दा ४॥)

दो साल का चन्दा ८)

अगर आप चाहते हैं कि चन्दामामा आप को हर महीने नियम से मिलता रहे तो चन्दामामा के ग्राहक बन जाइए।

★

चन्दामामा पब्लिकेशन्स

पो. बा. १६८६ :: मद्रास-१.

चन्दामामा को पत्र लिखने वाले

एक बात याद रखें !

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा हो गई है। तो भी मद्रास के डाक-विभाग के अधिकांश कर्मचारी हिन्दी नहीं जानते । हमें पत्र लिखने वाले पता भी हिन्दी में लिख देते हैं तो उनको बड़ी दिक्कत होती है। इस तरह हमारे बहुत से पत्र मृत-पत्र-कार्यालय (डेड लेटर आफ़ीस) में जाकर बहुत अनावश्यक देरी के बाद हमें मिलते हैं। इसलिए जो चन्दामामा से पत्र-व्यवहार करते हैं उनसे हमारा अनुरोध है कि वे स्पष्ट अक्षरों में अंग्रेज़ी में ही पता लिखा करें। कुछ लोग गुजराती, मराठी और उर्दू में भी पत्र लिख देते हैं। उनसे हमारा अनुरोध है कि वे कृपया हिन्दी या अंग्रेज़ी में ही पत्र लिखें।

चन्दामामा, पो. बा. नं. १६८६ मद्रास-१

चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र

संचालक : चक्रपाणी

वर्ष १ | जनवरी १९५० | अङ्क ५

मुख-चित्र

कंस मथुरा-पुरी का अत्याचारी राजा था। उसकी बहन देवकी का ब्याह वसुदेव से हुआ था। ब्याह के बाद जब कंस वसुदेव और देवकी को विदा करने गया तो आकाश-वाणी बोली-'हे कंस! इसी देवकी के आठवें गर्भ से होने वाली संतान तुम्हारा वध करेगी।' यह सुन कर कंस ने तुरन्त देवकी को मार डालना चाहा। पर वसुदेव के बहुत गिड़गिड़ाने पर उसे छोड़ दिया। वसुदेव ने भी वादा किया कि वह अपनी हरेक सन्तान को लाकर कंस के हाथ सौंप देगा। देवकी के सातों गर्भ से जो सन्तान हुई, वसुदेव ने तुरन्त लाकर कंस को सौंप दी। पहले तो कंस ने तरस खाकर उन्हें छोड़ दिया। पर पीछे नारद के उकसाने पर उसने उन सातों नौनिहाल बच्चों को मार डाला और देवकी-वसुदेव को कैदखाने में डाल दिया। आधी रात के समय उसी कैदखाने में देवकी के आठवें गर्भ से भगवान ने जन्म लिया। उन्होंने अपने विष्णु-रूप में माता-पिता को दर्शन दिया और कहा-'मुझे तुम अभी गोकुल में नन्द के घर पहुँचा दो। ऐसा करने से तुम्हें कोई कष्ट न होगा।' यह कह कर वे अन्तर्धान हो गए।

फ़क़ीर की बुद्धिमानी

ऊँट हाँक ले जाने वाले
बैठे सुख से ताल किनारे।
लँगड़ा ऊँट खो गया जब, तो
लगे ढूँढने वे बेचारे।

उसी समय भटका फ़क़ीर आ
पहुँचा, वहीं दैव की नाईं।
कहा ऊँट-वालों ने—'भाई!
ऊँट कहीं क्या दिया दिखाई?'

'लँगड़ा था?' पूछा फ़क़ीर ने,
'हाँ! हाँ!' एक साथ बोले सब।
'दाँत नहीं थे?' फिर फ़क़ीर ने
पूछा तो वे 'हाँ' बोले तब।

'चावल ढोता था?' यह सुनकर
सबके मुँह खिल गए खुशी से।
'हाँ! हाँ! वह किस ओर गया है?'
बोले सब निरोड़ कर साँसें।

तब फ़क़ीर बोला—'क्या जानूँ?
मुझ को ऊँट न दिया दिखाई।'
वे सब उससे लगे झगड़ने—
'ऊँट कहाँ! सच बोलो भाई!'

पकड़ ले गए वे फ़क़ीर को,
नालिश की जाकर क़ाज़ी से।
क़ाज़ी बोला—'ऊँट कहाँ है?
सत्य बताओ तुम जल्दी से।'

'सत्य बताता हूँ क़ाज़ी जी!'
वह फ़क़ीर बोला यों डर कर—
'क्यों न बताऊँ सत्य, मुझे क्या
नहीं जान जाने का है डर?

'चिह्न तीन टाँगों के ही जब
मुझे दिखाई दिए भूमि पर—
मैंने समझा, यह अवश्य ही
चलता है धीरे लङ्गड़ा कर।

'उसकी चरी घास जब, जड़ से
कुतरी-सी दी नहीं दिखाई—
मैंने समझा, हाँ! अवश्य ही
दाँत नहीं हैं इसके भाई!

'चावल गिरे देख कर मैंने
समझा, यह ढोता है चावल!'
सुन क़ाज़ी ने उसे छुड़ाया;
गए ऊँट-वाले हो व्याकुल।

सिपाही की

राजा के नथुने पर
जब आ बैठा मच्छर,
शहर, शहर, गली, गली
मची प्रचण्ड खलबली।

सब दरबारी, वज़ीर,
बड़े बड़े शूर, वीर
भाला, बरछी लेकर
टूट पड़े मच्छर पर।

पर उसको पा न सके,
वे उसको छू न सके।
भाला, बरछी लेकर
लौट गए शरमा कर।

मार मार कर चक्कर,
फिर आ बैठा मच्छर,
राजा के नथुने पर
बड़ी शान से जम कर।

बहादुरी

मुँह बाए दरबारी
खड़े; बड़ी लाचारी,
क्या करते ? हाय ! बड़ी
विपदा अब आन पड़ी।

इतने में एक वीर
झपटा ज्यों, चले तीर।
जमा दिया उस मच्छर
पर इक मुक्का कस कर।

'हाय ! हाय ! हाय ! राम !'
कहते राजा धड़ाम
से नीचे लोट गया;
पर मच्छर छूट गया।

देख वीरता भारी
फूल गए दरबारी।
राजा ने भी खुश हो
दिया मंत्रि-पद उसको।

छाते और

बहुत पहले जमदग्नि नामक बड़े भारी तपस्वी रहते थे। वे और ऋषि-मुनियों की भाँति केवल तप करने में ही नहीं, अस्त्र-शस्त्र चलाने में भी बड़े चतुर थे। उनकी स्त्री का नाम था रेणुका।

जमदग्नि को तीर चलाने का बड़ा शौक था। वे रोज़ एक बड़े मैदान में जाकर तीर चलाने का अभ्यास करते। वे धनुष पर तीर चढ़ा कर छोड़ते जाते। रेणुका उन तीरों को खोज कर उठा लाती और पति के हाथों में दे देती।
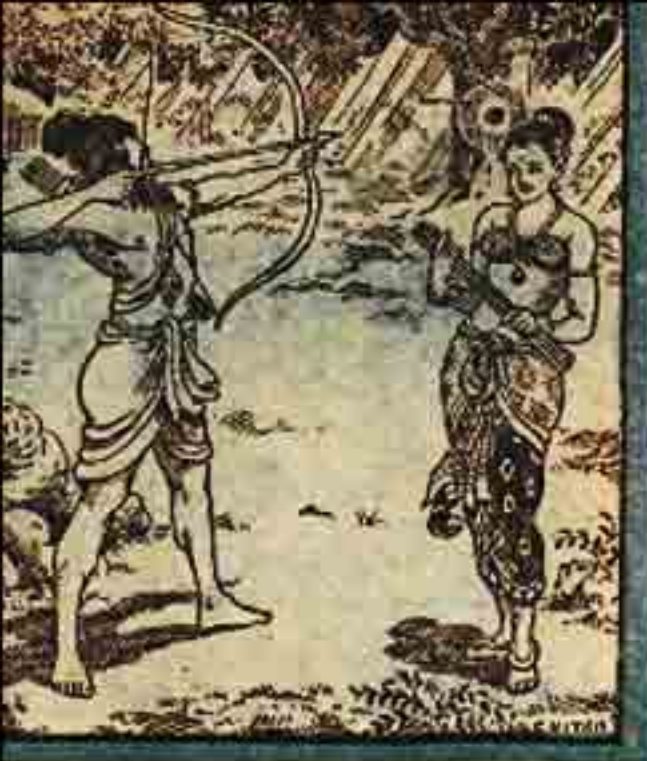
एक दिन जमदग्नि रोज़ की तरह तीर चला रहे थे। तब तक दिन चढ़ आया था और धूप बड़ी तेज हो उठी थी। रेणुका छूटे हुए तीर लाने गई। पर जब बड़ी देर तक नहीं लौटी तो मुनि के मन में चिंता हुई। वे उसे ढूँढ़ने निकले। थोड़ी दूर जाने पर उन्होंने देखा कि रेणुका पैर घसीटती धीरे धीरे आ रही है। धूप के कारण उसका सारा बदन कुम्हला गया है। पैरों में फफोले पड़ गए हैं और वह बड़े कष्ट से पैर उठा रही है।

यह देख कर मुनि को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने कहा—'ओह! इस सूरज की इतनी हिम्मत कि यह मेरी स्त्री को कष्ट पहुँचाए! क्या समझ रखा है इसने मुझे! देख तो, अभी मैं उसकी कैसी दुर्गति करता हूँ!' यह कहते हुए उन्होंने धनुष पर एक भयङ्कर तीर चढ़ा कर सूरज पर निशाना लगाया।

जमदग्नि का क्रोध देख कर सूरज एक ब्राह्मण बन कर पृथ्वी पर उतर आया और मुनि के सामने जाकर कहने लगा—"मुनिवर! आप यह क्या कर रहे हैं! क्या आप भगवान सूरज को ही मार डालना चाहते हैं! तो फिर

सुशीला देवी

जूते की कहानी

यह सारी दुनियाँ कैसे बचेगी! सूरज की रोशनी के बिना लोग जिएँगे कैसे! महान ज्ञानी होकर भी ऐसा कार्य करना क्या आप के लिए उचित है!"

"ब्राह्मण-देवता! मुझे रोको मत। तुम नहीं जानते कि सूरज ने मेरे साथ कैसी धृष्टता की है। क्या तुम जानते हो कि उसने मेरी पत्नी को कितना सताया है! मैं उस दुष्ट को दण्ड दिए बिना नहीं रहूँगा।" जमदग्नि ने जवाब दिया। तब सूरज ने अपना असली रूप प्रगट किया और कहा—"मुनिवर! अब मैं आप से क्या छिपाऊँ! मैं ही सूरज हूँ। अनजान में मेरे कारण आप की स्त्री को जो कष्ट हुआ है, उस के लिए आप मुझे क्षमा करें।"

सूरज को क्षमा माँगते देख कर जमदग्नि का सारा क्रोध ठंडा हो गया। उन्होंने सूरज को मीठी झिड़की देते हुए कहा—"सूरज! कैसे दुष्ट हो तुम! जरा देखो तो, बेचारी रेणुका किस तरह कुम्हला गई है! वह पसीने से तर-बतर हो रही है। पैरों में फफोले उठ गए हैं और मुख मुरझा गया है। तुम्हीं कहो—मुझे क्रोध न हो तो क्या हो!" तब सूरज ने मुसकुराते हुए एक छाता और एक जोड़ा जूता जमदग्नि के हाथ में रख कर कहा—'भगवन्! यह लीजिए। ये दोनों चीज़ें बड़े काम की हैं। मैंने माता रेणुका के लिए इनकी सृष्टि की है। जूते पहन लेने से न पैर जलेंगे और न फफोले पड़ेंगे। छाता लगा लेने से धूप कुछ भी नहीं कर सकती। जो इनसे काम लेंगे, उन्हें मुझ से कोई कष्ट न होगा।' यह कह कर सूरज अंतर्धान हो गए।

उसी दिन से पृथ्वी के मनुष्य छाते और जूते का इस्तेमाल करने लगे।

बच्चो !

ऊपर छः तस्वीरें एक जैसी दीखती हैं। किन्तु वास्तव में केवल दो एक-सी हैं। बाकी चारों दूसरी तरह की हैं। बताओ तो देखें, वे दोनों कौन-कौन सी हैं? अगर तुम न बता सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

भोजन के समय किसान के लड़के ने पैरों से पकड़ कर वर्धमान को ऊपर उठा लिया और उसे उलट-पुलट कर देखने लगा। अब तो वर्धमान के होश उड़ गए। कहीं लड़के के हाथ से छूट कर गिर गया तो! लेकिन खैर थी कि किसान के लड़के ने फिर उसे हिफ़ाज़त से नीचे रख दिया।

खाने पीने के बाद किसान की स्त्री ने वर्धमान को ले जाकर एक बिस्तरे पर लिटा दिया। वर्धमान ने जब पलङ्ग के किनारे झुक कर नीचे झाँका तो उसका सिर चकराने लगा। उतना ऊँचा और लम्बा-चौड़ा पलङ्ग उसने आज तक नहीं देखा था। जल्दी ही वर्धमान को गाढ़ी नींद आ गई।

आधी रात के क़रीब एक बार उसकी नींद खुल गई। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। वह सोचने लगा—"हाय! भगवान! अब मेरा क्या हाल होगा? इन दैत्यों के बीच से मुझे कैसे छुटकारा मिलेगा!" इतने में कोई भयानक आवाज़ आई और वह चौंक कर उस ओर देखने लगा। दो चूहे एक बिल से निकल कर उस कमरे में टहलने लगे।

वे चूहे हमारी भैंसों इतने बड़े थे। उनको देख कर वर्धमान घबरा गया। उसी समय एक चूहा उछल कर उसके पलङ्ग पर चढ़ गया। वह कुछ देर तक वर्धमान की ओर टक लगा कर देखता रहा। फिर एक दम उस पर टूट पड़ा। वर्धमान ने म्यान से तलवार खींच ली और बड़ी होशियारी से पैंतरे बदल कर एक ऐसा वार किया कि चूहा लोट पोट कर ठंढा हो गया। दूसरा चूहा घायल होकर भाग गया।

'गलिवर्स ट्रावेल्स' का स्वेच्छानुवाद

उसने उसे अपने खिलौनों के नन्हे से पालने में सुला दिया और एक ऊँची ताक में छिपा दिया, जिससे चूहे वहाँ तक न पहुँच सकें। दिन में तो चपला उसे हरदम साथ-साथ रखती। वह उसे अपने साथ हर जगह ले जाती। बार-बार अपनी हमजोलियों को दिखाती। वर्धमान को उसने उस देश की बोली बोलना भी सिखा दिया। उसने उसके लिए अपने ही हाथों से एक पोशाक भी सीकर तैयार कर दी। वह पोशाक उसके गुड्डे गुड़ियों की पोशाक से कुछ बड़ी न थी।

किसान ने बहुत सोच-विचार कर अपनी छोटी लड़की चपला को बुलाया और वर्धमान को उसके हवाले कर दिया। वह लड़की नौ साल की थी। लम्बाई क़रीब पैंतीस फुट; लेकिन घर वाले उसे 'नाटी' कह कर पुकारते थे। वह लड़की बड़ी सीधी-सादी थी। इसलिए किसान ने सोचा कि वर्धमान को उसके हाथ सौंप देने से उसे किसी तरह की तकलीफ़ न होगी।

"यह मेरा मुन्ना है। मैं इसे अपने नन्हे पलङ्ग पर लोरियाँ गाते हुए, थपकी देकर सुलाऊँगी।" चपला ने अपने मन में कहा।

धीरे-धीरे यह ख़बर चारों ओर फैल गई कि चपला के पिताजी को कहीं से एक नन्हा-सा जीव मिल गया है, जो देखने में ठीक आदमियों की तरह है। बस, अब क्या था? आस-पड़ोस के गाँवों के लोग उसको देखने के लिए इस तरह आने लगे, मानों कुम्भ का मेला हो। यह देख कर कुछ दोस्तों ने उस किसान को सुझाया—"इस भुनगे को देखने के लिए इतने लोग आ रहे हैं। लेकिन बोलो तो, इससे तुम्हें क्या फ़ायदा हो रहा है? कुछ भी तो नहीं। सोचो, इसके ज़रिए तुम कुछ रुपए क्यों न कमा लो!" किसान ने

कहा—"आह! यह तो तुमने अच्छा सुझाया। मैं ज़रूर ऐसा ही करूँगा। अफ़सोस तो यह है कि इतने दिन से यह सीधी सी बात मेरे दिमाग में नहीं आई। अगर मैं इसके देखने के लिए टिकट लगा दूँ तो कुछ ही दिनों में मालामाल हो जाऊँगा।"

किसान ने उस रात अपनी छोटी लड़की को बुला कर यह बात सुना दी और कहा—"देखो, कल तड़के उठ कर तैयार रहना। हम तुम्हारे 'मुन्ने' को हाट में ले चलेंगे।"

चपला को यह अच्छा न लगा। वह नहीं चाहती थी कि उसके पिता उसके 'नन्हे मुन्ने' को हाट में ले जाकर, उसका तमाशा दिखा कर रुपया कमाएँ। वह जानती थी कि इसमें उसके प्यारे 'मुन्ने' की हेठी है। उसे यह डर भी था कि देखने वाले उसे ज़रूर छेड़ेंगे और छड़ी या छाते से कुरेद कर उसके हाथ पैर तोड़ देंगे। लेकिन वह बेचारी कर ही क्या सकती थी? उसने रोते हुए सारा हाल अपने 'मुन्ने' से कह सुनाया। उसे उस समय अपने माँ-बाप पर बड़ा गुस्सा आ रहा था। जब वे उसे हाट में ले जाकर तमाशा दिखाना चाहते थे तो पहले ही क्यों न बता दिया? क्यों उसे लाकर उसके हाथ में सौंप दिया और कहा कि 'लो, यह तुम्हारे लिए है?' वे हमेशा ऐसा ही करते हैं। पिछली बार भी उस का मन बहलाने के लिए एक बकरी का बच्चा खरीद लाए थे। जब दो तीन महीने तक पाल कर उसने उसे मोटा-ताज़ा बनाया तो उन्होंने बेच दिया एक कसाई के हाथ! कैसे आदमी हैं?

वर्धमान ने उसे ढाढ़स बँधाते हुए कहा—"चुप रहो! रोओ नहीं! इसमें मेरे लिए कोई ख़तरा नहीं है! मेरा भी इस देश को

और इस देश के आदमियों को देखने का जी चाहता है। तिस पर तुम तो हमेशा मेरे साथ रहोगी ही! तुम्हारे पिताजी मुझे अकेले तो ले नहीं जाएँगे। क्योंकि तुम्हारे सिया मेरी देख-भाल करना और कोई जानता नहीं। तब फिर डरने की बात क्या!"

वर्धमान को भी यह अच्छा नहीं लग रहा था। लेकिन उसके मन में आशा हो रही थी कि इस घर से एक बार बाहर निकलते ही शायद बच कर भाग निकलने की कोई सूरत नजर आ जाए।

एक पेटी में मुलायम गद्दे बिछा कर वर्धमान के रहने के लिए एक कमरा-सा बनाया गया। हवा के आने जाने के लिए उसके चारों तरफ़ कुछ छेद बना दिए गए। उसके आगे की ओर एक दरवाजा काट कर उसमें किवाड़ भी लगा दिए गए। उस पेटी में वर्धमान को बन्द कर चपला और उसके पिता उसे अपने साथ लेकर एक घोड़े पर चढ़े और तड़के ही हाट की ओर चल दिए। उस पेटी में मुलायम गद्दों पर वर्धमान आराम के साथ बैठा हुआ था। चपला उस
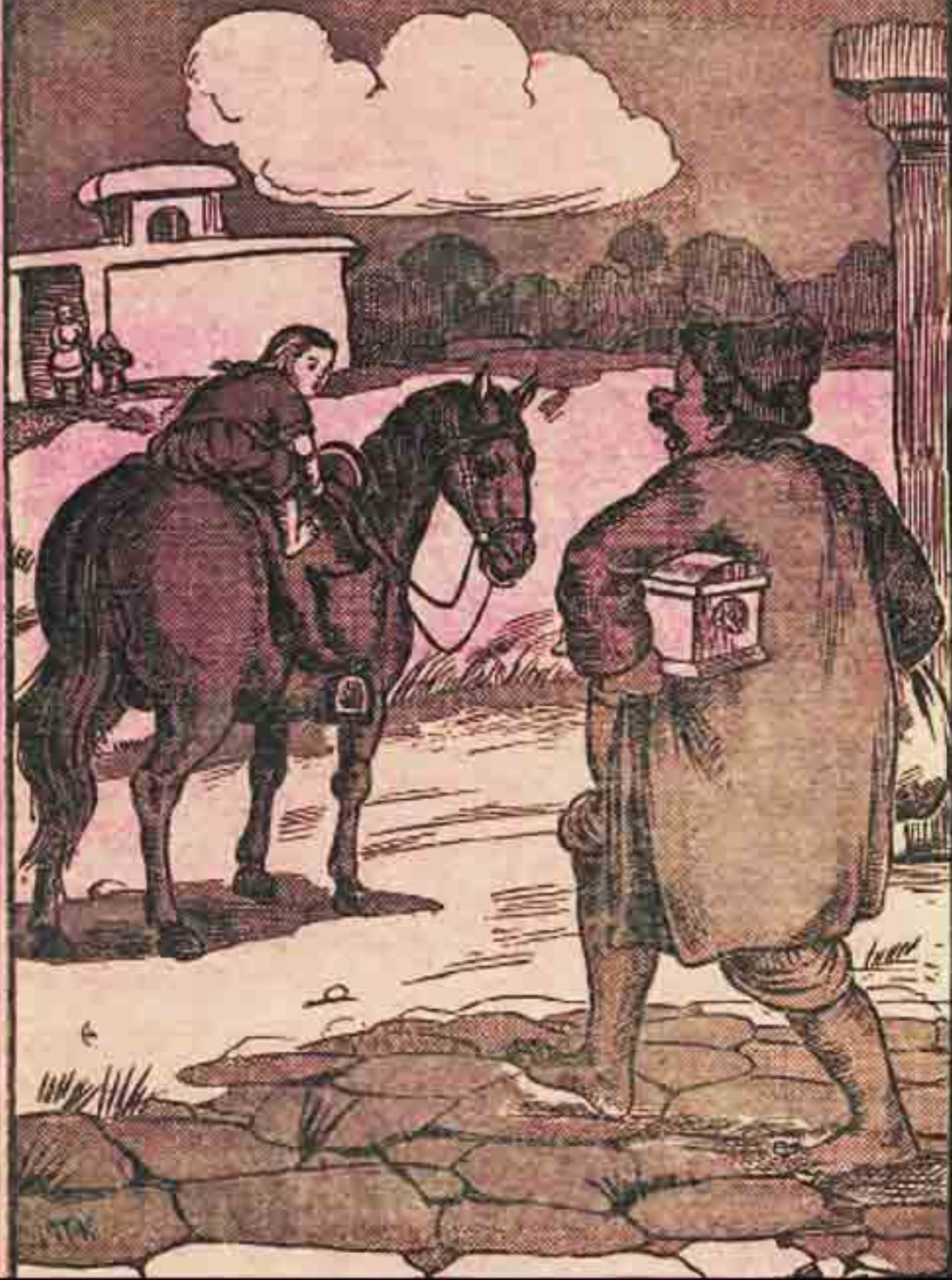
कमरा किराए पर लिया और उसी में वर्धमान की प्रदर्शिनी लगाई।

पलक मारते-मारते सारा कमरा तमाशाइयों से खचाखच भर गया। कहीं सुई की नोक धरने की भी जगह बाकी न रही। लोग बहुत दिनों से इस 'मुन्ने' के बारे में सुनते आ रहे थे। आज उन्हें उसे अपनी आँखों से देखने का मौक़ा भी मिल गया।

चपला ने अपनी बोली में वर्धमान से कुछ सवाल किए। वर्धमान ने उसी बोली में जवाब दिए। उस नन्हे-से आदमी को

पेटी को खुद पकड़े हुए थी। अब वह किसान भी वर्धमान पर बड़ा प्यार दिखा रहा था। क्योंकि उसे आशा थी कि इसी के ज़रिए वह माला-माल हो जाएगा।

लेकिन जब घोड़ा दौड़ने लगा, तब तो वर्धमान को बड़ी तकलीफ़ हुई। एक-एक छलाँग में उसे ऐसा लगता था मानों हवा में उड़ा जा रहा है। जब उसका जहाज़ तूफ़ान में फँस कर डाँवा-डोल हो रहा था, तब भी उसे इतनी तकलीफ न हुई थी।

आखिर वे तीनों किसी तरह हाट में पहुँचे। वहाँ एक धर्मशाला में उन्होंने एक

उनकी अपनी बोली में बातें करते देख कर सब लोग हँसने लगे। उनके अचरज का ठिकाना न रहा। उसके बाद वर्धमान उस मेज़ पर थोड़ी दूर तक चला। चपला ने एक छोटी सी कटोरी में उसे पानी पिलाया। उसने जैसे-जैसे कहा, वर्धमान ने किया। उसके बाद उसने थोड़ी देर तक तलवार घुमा कर उन सब का मन बहलाया। इसके बाद चपला ने एक तिनका उसके हाथ में दे दिया। उस तिनके से वर्धमान ने तरह-तरह के तमाशे किए। यह सब देख कर हँसते हँसते लोगों के पेट फूलने लगे।

इस तरह वह किसान अब वर्धमान के ज़रिए खूब रुपया कमाने लगा। रुपए के साथ-साथ उसका लालच भी बढ़ता गया। अब वर्धमान की बड़ी ख़ातिर होने लगी थी। चपला और उसके पिता के सिवा कोई उसके पास फटकने भी न पाता था। देखने वाले दूर से ही देखें, हाथ बढ़ा कर उसे छुएँ नहीं, इसका अच्छा प्रबन्ध किया गया।

एक दिन एक नटखट लड़के ने मटर का एक दाना वर्धमान पर फेंका। ख़ैर थी कि निशाना चूक गया; नहीं तो वर्धमान का सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाता। उस नटखट लड़के की ऐसी ख़बर ली गई कि फिर वह कभी इस तरह शरारत न करे।

अब हर रोज़ वर्धमान की प्रदर्शिनी होती। हमेशा आने-जाने वालों का ताँता-सा लगा रहता। वर्धमान एक ही काम बार-बार करते करते थक जाता। कभी-कभी तो बेहोश होकर गिर पड़ता।

अब उस किसान के दिन बड़े मौज से कटने लगे। घर में रुपए धरने की जगह न थी। इस मुन्ने के साथ-साथ मानों उसके घर में लक्ष्मी भी आ गई थी।

लेकिन किसान को इससे सन्तोष न हुआ। वह एक बारगी कुबेर बन जाने का उपाय सोचने लगा। उसने अपने मन में कहा—"देहातों में कितने दिन तक तमाशा करता रहूँ! अगर राजधानी में जाकर राजा के दरबार में यह प्रदर्शिनी करूँ तो मेरा भाग्य खुल जाए।" उस किसान ने अपनी स्त्री से भी सलाह-मशविरा की। उसके बाद चपला को बुला कर कहा—"बिटिया रानी! अगर हम अपने मुन्ने को राजा के यहाँ ले चलें तो राजा-रानी भी उसे देख कर बहुत खुश होंगे। फिर वे तुम्हें बहुत हीरे-जवाहरात, सोना-चाँदी भेंट देंगे। राजा के सामने तुम्हीं मुन्ने को दिखलाना। हम उसे छुएँगे भी नहीं! बोलो, क्या कहती हो?" [सशेष]

सदाव्रत का प्रभाव

किसी गाँव में एक ब्राह्मण रहता था। अगर कोई भूला-भटका राही उसके घर आ जाता तो वह उसकी बड़ी आव-भगत करता और बड़े प्रेम से खिलाता-पिलाता था। उसके घर से कोई भी दीन-दुखिया भूखा लौटने नहीं पाता था। अगर किसी दिन संयोग-वश कोई मेहमान उसके घर नहीं आता तो वह खुद किसी को ढूँढ़ लाने को निकल जाता। इस तरह जब बहुत दिन बीत गए तो एक दिन ब्राह्मण को यह जानने की इच्छा हुई कि इस तरह सदाव्रत करने का फल क्या होता है? उसने बहुत लोगों से पूछा, लेकिन किसी ने ठीक जवाब नहीं दिया।

एक दिन एक भले आदमी ने कहा—"सदाव्रत का फल बहुत अच्छा होता है। अगर तुम उसका रहस्य जानना चाहो तो माता अन्नपूर्णा के मन्दिर में जाओ। माता के सिवा यह कोई नहीं बता सकता। इसलिए तुम वहीं जाकर पूछो।"

यह तो तुम जानते ही होगे कि माता अन्नपूर्णा काशी विश्वनाथ की पत्नी हैं और पार्वती इनका दूसरा नाम है। सदाव्रत बाँटने में, भूखों को अन्न-दान करने में उनसे बढ़ कर और कोई नहीं है। इसीलिए काशी में कोई भूखा नहीं रहता। इसलिए ब्राह्मण काशी गया और गङ्गा किनारे बैठ कर घोर तप करने लगा।

कुछ दिन बाद माता अन्नपूर्णा को उस पर दया आ गई। उन्होंने प्रगट होकर पूछा—"बोलो, तुम क्या चाहते हो?"

ब्राह्मण ने दण्डवत करके कहा—"माँ, मैं और कुछ नहीं चाहता। सिर्फ इतना बता

भारत भूषण

राजा ! मैं इसके सिवा और कुछ नहीं चाहता कि जब तुम्हारे सन्तान पैदा हो, तो एक बार मुझे दिखा दो। लेकिन एक शर्त है। जब मैं उसे देखने जाऊं तब वहाँ कोई न रहे; यहाँ तक कि तुम्हारी रानी भी नहीं।' राजा जरूर तुम्हारी बात मान लेगा। जब लड़का पैदा हो जाए और तुम उसे देखने जाओ तो तुम एकांत में उस लड़के से पूछ लेना कि सदाव्रत का क्या प्रभाव होता है! वह तुम्हें बता देगा।" यह उपाय बता कर देवी अन्तर्धान हो गई!

ब्राह्मण सीधे हेमावत नगर की ओर चल पड़ा। राह में उसे एक घने जङ्गल से होकर जाना पड़ा। जङ्गल में घुसते ही वह राह भूल गया और इधर-उधर भटकने लगा। इतने में एक भील ने सामने आकर पूछा—"ब्राह्मण महाराज! मालूम होता है, आप भटक गए हैं। कहिए, आपको कहाँ जाना है?"

'मुझे हेमावत नगर जाना है।' ब्राह्मण ने जवाब दिया। "तब तो आप भटकते-भटकते बहुत दूर चले आए। अब साँझ भी हो चली। यह जङ्गल बाघ, चीते आदि

दो कि सदाव्रत देने का फल क्या होता है? यह तुम्हारे सिवा और कौन बताए?"

तब माता अन्नपूर्णा ने कहा—"सदाव्रत का प्रभाव तो पूरी तरह मैं भी नहीं जानती। लेकिन मैं तुमको एक उपाय बताती हूँ, सुनो। हिमालय पर्वत के निकट हेमावत नाम का एक नगर है। उस नगर के राजा के कोई सन्तान नहीं है। तुम उस राजा के पास जाओ और उसे आशीष दो, जिससे उसके सन्तान हो। राजा प्रसन्न होकर कहेगा—'बोलो, क्या चाहते हो? मैं तुम्हें मुँह-माँगी चीज दूँगा।' तब तुम उससे कहना—'हे

खूँखार जानवरों से भरा हुआ है। इसलिए आप यहीं रुक जाइए। मैं कल सवेरे आपको राह बताऊँगा।" भील ने कहा।

ब्राह्मण को भी उसकी बात जँच गई। वह भील के साथ चला गया। भील बड़ी चिन्ता में पड़ गया कि ब्राह्मण देवता को वह क्या खिलाए-पिलाए ? वे उसकी तरह हरिण आदि का मांस तो खा नहीं सकते थे ! इसलिए उसने बड़ी मेहनत से कुछ कन्द-मूल जमा किए और ब्राह्मण के सामने लाकर रख दिए। ब्राह्मण ने किसी तरह अपनी भूख मिटाई और ठण्डा पानी पीकर भगवान का नाम लिया। भील की अतिथि-सेवा देख कर उसे बड़ी खुशी हुई। वह अपना अँगोछा बिछा कर नीचे लेटने लगा। लेकिन भील ने उसे रोकते हुए कहा—"देवता, नीचे न सोइये। यहाँ आधी रात को बाघ और चीते घूमते फिरते हैं। आप ऊपर मचान पर चले जाइये।" यह कह कर उसने ब्राह्मण को ऊपर सुला दिया और खुद नीचे बैठ कर रात भर पहरा देता रहा। रात बीतने पर थी कि बेचारे थके-माँदे भील की आँख लग गई। उसी समय एक बाघ वहाँ आया और भील को मार कर खा गया।

ब्राह्मण की आँख खुली। भील को मरा देख कर उसे बड़ा दुख हुआ। उसने सोचा—"बेचारे ने मेरे लिए जान गँवा दी।" इतने में उस भील की स्त्री ने आकर कहा—"देवता! आप दुख न कीजिए। 'विधि का लिखा को मेटन हारा !' जो होना था सो हो गया। चलिए, मैं आपको हेमावत की राह दिखा दूँ।" यह कह कर उसने ब्राह्मण को हेमावत नगर पहुँचा दिया और खुद वापस आकर पति के साथ सती हो गई।

ब्राह्मण भील और भीलनी की सज्जनता पर अचरज करता हुआ हेमावत नगर पहुँचा।

वहाँ राजा के दरबार में जाकर उसने देवी के कहे मुताबिक राजा को आशीर्वाद दिया। राजा ने खुश होकर कहा—'बोलो, क्या चाहते हो?' तब ब्राह्मण ने राजा को अपनी इच्छा बताई। राजा ने उसकी इच्छा पूरी करने का वचन दे दिया।

ठीक नौ महीने बाद रानी के एक सुन्दर लड़का पैदा हुआ। यह खबर सुनते ही ब्राह्मण दौड़ा-दौड़ा राजमहल पहुँचा। रानी ने उसको ले जाकर बच्चे के पास छोड़ दिया और खुद कमरे से बाहर चली गई। एकांत देख कर ब्राह्मण ने उस नव-जात शिशु से पूछा—"सदाव्रत देने का क्या फल होता है, बताओ तो?" उस बच्चे ने बड़ों की भाँति जवाब दिया—"आज से दस महीने पहले जङ्गल में आते-आते तुम भटक गए थे। तब एक भील ने तुम्हारी आव-भगत की और कन्द-मूल खिलाए। मैं वही भील हूँ। मैंने तुम्हारे लिए जो छोटा सा काम किया था, उसी के बदले इस राजा के घर में पैदा हुआ हूँ। उसी पुण्य के फल से कुछ ही दिनों में मैं राजा बनूँगा। जब सिर्फ एक बार मेहमान को कुछ कन्द-मूल खिला कर मुझे इतना फल मिला, तब जो रोज नियम से सदाव्रत देता है, वह कितना पुण्यवान होगा!—खुद सोच लो। अब तुम समझ गए न कि सदाव्रत देने का क्या फल होता है?" इतना कह कर वह बच्चा जोर-जोर से रोने लग गया।

ब्राह्मण की आँखें खुल गईं। वह मन ही मन अचरज करता हुआ घर लौट आया और अपनी पत्नी से सारा किस्सा कह सुनाया। सुन कर उसकी स्त्री भी अचम्भे में पड़ गई। उस दिन से वे दोनों और भी ध्यान के साथ सदाव्रत बाँटने लगे।

एक गाँव में एक ग़रीब ब्राह्मण रहता था। वह बड़ा विद्वान था। लेकिन उन दिनों विद्वानों की उतनी पूछ-क़दर नहीं थी। इसलिए बेचारा ब्राह्मण ग़रीबी से छुटकारा नहीं पा सका। तिस पर उसका परिवार भी बहुत बड़ा था। बाल-बच्चे बहुत थे और कमाने वाला कोई नहीं था। आखिर एक दिन ब्राह्मण अपनी ज़िंदगी से तंग आ गया। वह घर में किसी से कहे-सुने बिना चुपचाप काशी की ओर निकल गया।

राह में बहुत से कष्ट उठाते वह ब्राह्मण किसी भाँति काशी जा पहुँचा। वहाँ एक दो दिन आराम लेकर वह प्रयाग गया। तुम तो जानते ही हो कि प्रयाग को 'तीर्थराज' कहते हैं। वहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती, तीन नदियाँ मिलती हैं। उस जगह को 'त्रिवेणी-संगम' कहते हैं।

तीनों नदियाँ एक से एक बढ़ी-चढ़ी और परम पवित्र हैं। उस संगम में नहाने से जो पुण्य मिलता है उसका क्या कहना है! जो जिस कामना से उस संगम में प्राण छोड़ देता है उसको दूसरे जन्म में वह चीज़ ज़रूर मिलती है।

इतना ही नहीं, पुण्य-लोभ से लाखों लोग दूर-दूर से वहाँ आते रहते हैं। वे सब बड़े प्रेम से त्रिवेणी में स्नान करते हैं। लोगों की देखा-देखी उस ग़रीब ब्राह्मण ने भी त्रिवेणी में डुबकी लगाने का सङ्कल्प किया। उसने सोचा—'धन-दौलत तो मेरे भाग्य में है ही नहीं; कम से कम कुछ पुण्य तो कमा लूँ!'

वह स्नान के लिए एक निर्जन घाट पर गया। वहाँ उसे चार सुन्दर लड़कियाँ दिखाई दीं। वे भी शायद वहीं नहाने आई थीं। उनकी सुन्दरता देख कर ऐसा मालूम होता

श्री अर्जुन

था, मानों देव-लोक की परियाँ नहाने उतरी हैं।

ब्राम्रण उनको देख कर एक पेड़ की आड़ में छिप गया। वह देखना चाहता था कि ये क्या करने जा रही हैं? वे चारों लड़कियाँ नदी में उतर कर धीरे-धीरे गहरे पानी में जाने लगीं। यहाँ तक कि पानी उनके गले तक आ गया। तब ब्राम्रण चुप न रह सका। उसने जोर से चिल्ला कर कहा—"ऐ लड़कियो! आगे न जाओ, नहीं तो डूब जाओगी।"

"डूबने के लिए ही तो आई हैं हम। यहाँ डूब जाएँगी तो अगले जन्म में हमारी इच्छाएँ पूरी होंगी।" उन चारों ने हँसते हुए जवाब दिया। बेचारा ब्राम्रण अचरज से मुँह बाए खड़ा रह गया।

उन चारों में से पहली लड़की ने कहा—"हे भगवान! लोग कहते हैं कि धन ही जगत का मूल है। ग़रीब आदमी की कहीं कोई क़दर नहीं करता। इसलिए मैं चाहती हूँ कि अगले जन्म में मुझे धनवान वर मिले। पर वह कंजूस न हो, प्रभु! ऐसा वर दो कि मेरा पति धनवान हो; साथ ही दान-पुण्य करने वाला भी हो।" यह कह कर वह लड़की डूब कर लापता हो गई।

दूसरी लड़की ने कहा—"भगवन्! रुपया सदा किसी के पास नहीं टिकता। लेकिन जो विद्वान होता है वह धन और यश दोनों पाता है। इसलिए कृपा करके ऐसा वर दो कि अगले जन्म में मुझे महान पंडित और कवि पति मिले। मैं इसके सिवा और कुछ नहीं चाहती।" यह कह कर वह भी त्रिवेणी में डूब गई। तीसरी ने कहा—"भगवान!

जब धन के साथ-साथ विद्या भी होती है तो 'सोने में सुगन्ध' भी आ जाती है। लेकिन जब इन दोनों के साथ प्रभुता भी हो तो फिर क्या पूछना! इसलिए मैं अगले जन्म में एक ऐसे राजा की रानी बनूँ जो कुबेर-सा धनी और ब्रह्मा-सा विद्वान हो।" यह कह कर वह भी गहरे पानी में डूब गई।

फिर चौथी लड़की ने कहा—"भगवन्! जो देखने में सुन्दर नहीं, वह चाहे कितना ही धनवान और विद्वान हो, कोई उससे प्रेम नहीं करता। इसलिए रूप ही अमूल्य धन है। मुझे अगले जन्म में ऐसा पति दो जिसका बदन कुन्दन की तरह दमकता हो, जिसका मुँह चन्द्रमा के समान हो और जिसका रूप देख कर काम-देव भी ईर्ष्या करे।" यह कह कर वह भी डूब गई।

उनको इस तरह डूबते देख कर ब्राह्मण के मन में तरह-तरह के विचार उठने लगे। उनकी हिम्मत देख कर उसने दाँतों-तले

उँगली दवा ली और निश्चय कर लिया कि एक न एक कामना करके वह भी डूब जाए। लेकिन वह निश्चय न कर सका कि कौन सी कामना वह करे? उसने जिंदगी भर ग़रीबी की मार सही थी। तो क्या वह अगले जन्म में एक लखपती बनने की इच्छा करे! या उस कलमुँही औरत से पिंड छुड़ाने के लिए पतिव्रता पत्नी की माँग करे! इस भाँति वह बड़ी देर तक सोचता रहा। पर कुछ तय नहीं कर सका।

इतने में ब्राह्मण को वे चारों लड़कियाँ याद आ गईं। दुनियाँ में जितनी चाहने लायक चीज़ें थीं, अभी-अभी उन लोगों ने माँग लीं थीं। और अब बच ही क्या रहा? इतने में ब्राह्मण को एक बात सूझ गई। वह अँगोछा कमर में बाँध कर पानी में उतरा। उसने कहा—"भगवन्! मेरी एक ही इच्छा है। अभी जो चार लड़कियाँ पानी में डूब गई हैं, अगले जन्म में मुझे उनका पति बना दो। और मैं कुछ नहीं चाहता।" यह कह कर ब्राह्मण गहरे पानी में धँसा और डूब गया।

अपनी-अपनी कामना के अनुसार वे चारों लड़कियाँ अगले जन्म में चार राज-भवनों में पैदा हुईं। वह ब्राह्मण धारानगर के राजा सिंधुल के घर पैदा हुआ। वही आगे चल कर 'राजा भोज' के नाम से मशहूर हुआ। वे चारों लड़कियाँ कनकवती, चन्द्रप्रभा, सुवासिनी और पद्मवासिनी नामों से राजा भोज की रानियाँ बनीं।

राजा भोज-सा दानी, उनके समान धनी और उन-सा विद्वान और कौन हो सकता है?

एक समय वनकुमारी नामक एक सुन्दरी बाला थी। वह जैसी सुन्दरी थी, बुद्धि भी उसकी वैसी ही पैनी थी। वह हमेशा समुंदर के किनारे नाग-कन्याओं के साथ खेलती रहती थी।

उसकी माता का नाम था वनदेवी। धरती पर सब तरह के पेड़-पौधे, बेल-बूटे वगैरह उपजाना उसी का काम था। उसी की आज्ञा से पेड़ों में फल लगते और पौधों में फूल। खेतों में धान उपजता और बाड़ियों में तरकारियाँ। उसी की कृपा से मैदानों में मुलायम हरी-हरी घास बिछ जाती। उसका नाम भी इसी से 'वनदेवी' पड़ गया था।

एक दिन वनदेवी ने अपनी लाड़ली बिटिया से कहा—"बेटी! खेतों में धान पक गया है। कटाई के दिन आ गए हैं। मुझे अब कुछ दिन तक बिलकुल फ़ुरसत नहीं रहेगी। रात-दिन इन सुनहले खेतों की रखवाली करनी होगी। इसलिए जब तक मैं लौट न आऊँ, तू यहीं नाग-कन्याओं के साथ खेलती रह। देख, इन को छोड़ कर इधर-उधर घूमने मत जा।"

"बहुत अच्छा, माँ! तुम कुछ भी चिंता मत करो। मैं कहीं न जाऊँगी।" यह कह कर वनकुमारी नाग-कन्याओं के साथ खेलने चली गई। उसको देखते ही नाग-कन्याएँ दौड़ती हुई समुन्दर से निकल आईं। वनकुमारी उनके साथ बालू के घरौंदे बना कर खेलने लगी। वे सब घरौंदे बनातीं और फिर तालियाँ बजाकर हँसती हुई उन्हें मिटा भी देतीं। नाग-कन्याओं ने कौड़ियों की एक माला बना कर वनकुमारी के गले में डाल दी। वनकुमारी जब इधर-उधर दौड़ती तो उसके गले में माला झूलने लगती।

थोड़ी देर तक खेलने के बाद वनकुमारी ने कहा—"बहनो! आओ, हम फूल चुनने

चन्द्रकान्त मेहरोत्रा
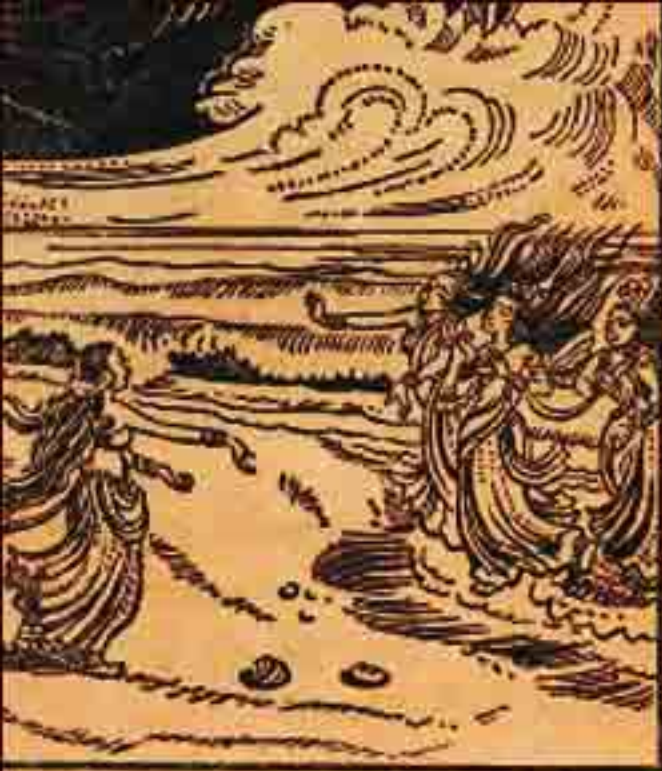
उसे एक छोटा-सा पौधा दिखाई दिया। उस पर सैकड़ों फूल लगे थे। उसे देख कर वनकुमारी बहुत ही प्रसन्न हुई। उसने चाहा कि उस पौधे को जड़ से उखाड़ कर ले चले। बहुत ज़ोर लगाने पर पौधा उखड़ा। लेकिन उस पौधे की जगह धरती में एक बड़ा छेद हो गया। उसमें से धड़ाके की आवाज़ सुनाई दी। पलक मारते-मारते एक सुन्दर सोने का रथ उस छेद से ऊपर आ गया। उस रथ में तीन काले-काले घोड़े जुते थे। उस रथ पर पाताल-पुरी का राजा

चलें। यहाँ से थोड़ी ही दूर पर एक बाग़ है। वहाँ रंग-बिरंगे फूल खिले हैं। चलो, हम फूल चुन कर सुन्दर माला गूँथें।" पर उसकी सखियों ने जवाब दिया—"नहीं बहन! हम तो उधर नहीं जा सकतीं। हमें समुन्दर का यह किनारा छोड़ कर और कहीं भी जाने की मनाही है।"

"अच्छा, तो तुम सब यहीं रहो। मैं अभी आँचल भर फूल तोड़ कर वापस आ जाती हूँ।" यह कह कर वह दौड़ती हुई बाग़ की ओर चली गई। वहाँ पहुँच कर उसने रंग-बिरंगे फूलों से अपना आँचल भर लिया और धीरे-धीरे लौटने लगी। इतने में

बैठा था। यह सब देख कर वनकुमारी घबरा गई और 'अम्मा, अम्मा' चिल्लाने लगी। लेकिन अम्मा वहाँ कहाँ थी!

पाताल के राजा ने वनकुमारी का हाथ पकड़ कर अपने रथ में बिठा लिया और फिर बड़ी तेज़ी से अपने नगर को लौट गया। वनकुमारी को रोते-बिलखते देख कर उसने यों समझाया—"देखो, अब रोने धोने से कोई फ़ायदा नहीं है। आँसू पोंछ लो; मैं तुम्हें अपनी रानी बनाऊँगा। तुम जो चीज़ चाहोगी, ला दूँगा। डरो मत! मैं कोई भूत थोड़े ही हूँ जो मुझे देख कर इतना डरती हो?"

"लेकिन मैं यहाँ एक पल भी रहना नहीं चाहती। मैं अपनी माँ के पास जाना चाहती हूँ।" वनकुमारी ने सिसकते हुए कहा।

*　　*　　*

कुछ देर बाद जब वनदेवी समुन्दर के किनारे लौटी तो उसकी बेटी का कहीं पता नहीं था। जब उसने नाग-कन्याओं से पूछा तो उन्होंने जवाब दिया—"फूल तोड़ने गई है। अभी तक लौटी नहीं।" यह सुनते ही वनदेवी का माथा ठनका। उसे बड़ी चिन्ता हुई कि यह अल्हड़ लड़की न जाने किधर भटक गई। वह उसे ढूँढने निकली। बेचारी, उसे कौन बताता कि उसकी लाड़ली बिटिया कहाँ है ! उसने हाथ में एक मशाल लेकर नौ दिन और नौ रात तक सारी धरती छान डाली; लेकिन सारी मेहनत बेकार।

खोजते-खोजते राह में उसे एक जगह चन्द्रमा दीख पड़ा। पूछने पर उसने कहा—"मैंने वनकुमारी का चीखना-चिल्लाना तो ज़रूर सुना था। लेकिन मुझे नहीं मालूम कि वह गई किस ओर है ! हाँ, शायद सूरज से पूछो तो पता चले। क्योंकि दिन में जो कुछ होता है वह उनसे छिपा नहीं रहता।" वनदेवी ने तुरन्त सूरज के पास जाकर पूछा तो उसने जवाब दिया—'हाँ, मैंने देखा कि पाताल का राजा उसे अपने रथ पर चढ़ा कर ले जा रहा है। लेकिन तुम कुछ सोच न करो। तुम्हारी बेटी का बाल भी बाँका न होगा। क्योंकि वह उसे प्यार करता है और अपनी रानी बनाना चाहता है।' यह सुनते ही वनदेवी क्रोध से काँपने लगी। उसने गुस्से से भर कर कहा—"जब तक पाताल-राज मेरी बिटिया को लाकर न सौंप देगा, तब तक धरती पर पानी नहीं पड़ेगा। न कोई पेड़ फलेगा, न फूल फूलेंगे और न कोई अनाज ही पैदा होगा।" इतना कह कर आँसू

बहाती हुई वह वहीं धरना देकर बैठ गई।

उस क्षण से धरती पर अकाल पड़ गया। पेड़ों के पत्ते पीले पड़ कर झड़ गए। यहाँ तक कि मैदानों में हरियाली भी न रही। किसान एँड़ी चोटी का पसीना एक कर देते। लेकिन खेतों में अनाज का दाना भी न उगता। चारों ओर हाहाकार मच गया और लोग भूख की आँच में तिल-तिल कर स्वाहा होने लगे।

अब चारों ओर देवी-देवताओं की पूजा होने लगी। लोग मंदिरों में जाकर 'त्राहि' 'त्राहि' करने लगे। देवताओं ने आकर वनदेवी से प्रार्थना की कि अपना शाप वापस ले लो। लेकिन वह टस से मस न हुई। हार कर उन्होंने वनकुमारी को लौटा लाने के लिए पाताल-राज के पास अपने दूत भेजे।

* * *

उधर पाताल-राज वनकुमारी को खुश करने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहा था। उसे आशा थी कि ज़रूर अन्त में वह उसे प्यार करने लगेगी। वह भौंरे की तरह उसके चारों तरफ़ मँडराता रहता और बार बार मनाया करता। वनकुमारी जानती थी कि वहाँ कुछ भी खाने-पीने से उसे उसका एहसान मानना पड़ेगा। इसलिए वह दाना-पानी छोड़ कर उसी तरह बैठी रही।

पाताल-राज ने छप्पन प्रकार के व्यञ्जन बनवा कर उसके सामने रखे। लेकिन उसने आँख उठा कर उधर देखा तक नहीं। वह कहती रही—"मुझे माँ के पास पहुँचा दो। मैं अपने बाग़ के फलों के सिवा कुछ नहीं खाती।" "अच्छा, तो तुम्हारे बाग़ के फल मैं यहीं मँगा देता हूँ।" यह कह कर

उसने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी—'जाओ, धरती पर जितने तरह के फल मिलें, सब तोड़ लाओ। देखो, देर न हो। पलक मारते लौट आओ।' सिपाहियों ने जाकर सारी धरती छान डाली। एक एक पेड़ उखाड़ डाला। लेकिन उन्हें फल तो दूर, कहीं एक हरी पत्ती भी न मिली। आखिर बहुत ढूँढने पर एक जगह उन्हें एक सूखा अनार मिला। उन्होंने उसे लाकर वनकुमारी के सामने रख दिया।

वह भूखी तो थी ही। झट उसे फोड़ कर छः दाने मुँह में डाल लिए। इतने में देवताओं के दूत वनकुमारी को लिवा लाने के लिए वहाँ आ पहुँचे। पाताल-राज ने उसे विदा करते हुए कहा—"वनकुमारी! तुम लौट जाना चाहती हो तो जाओ; लेकिन एक बात का ख्याल रखो। तुमने मेरे घर अनार के छः दाने खाए हैं। इसलिए तुम्हें हर साल छः महीने यहाँ आकर रहना होगा।"

अब वनकुमारी को अफ़सोस होने लगा कि उसने क्यों वे दाने खा लिए! आखिर लाचार होकर उसे पाताल-राज की बात माननी पड़ी। जब वह दूतों के साथ माँ के पास लौट आई तो उसकी माँ ने उसे दौड़ कर गले से लगा लिया। उसकी आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे। उसने अपना शाप लौटा लिया। तुरंत पानी बरसा। धरती पर हरियाली छा गई। पेड़ों पर नई कोपलें निकल आईं। फिर लताएँ फूलों से लद गईं।

पहले तो वनदेवी को यह मंजूर न हुआ कि उसकी लाड़ली बिटिया हर साल छः महीने पाताल-राज के यहाँ जाकर रहे। लेकिन वनकुमारी के बहुत कुछ समझाने-बुझाने पर वह भी राजी हो गई।

एक गाँव में एक ग़रीब आदमी रहता था। उसका इकलौता लड़का ब्याह के लायक हो गया था। लेकिन उसके ज़मीन-जायदाद कुछ न थी। इसलिए उसका ब्याह न हो रहा था। जैसे-जैसे दिन बीतते गए, लड़के के माँ-बाप उस चिंता से घुलने लगे।

एक दिन वे गाँव के एक पण्डित जी के घर गए और हाथ जोड़ कर बोले—"पण्डित जी महाराज! हम लोग बड़े ग़रीब हैं। लड़का सयाना हो गया है। लेकिन ग़रीबी के कारण उसका ब्याह नहीं हो पाता है। इसी लिए हम आपकी शरण में आए हैं। आप हमारा बेड़ा पार लगा दीजिए। जिस तरह हो, हमारे लड़के का ब्याह करा दीजिए। इसका भार अब आप पर ही है।" पण्डित जी को उन बेचारों की बातें सुन कर दया आ गई। इसलिए उन्हों ने उस लड़के का ब्याह कराने का बीड़ा उठा लिया। पण्डित जी बड़े भले आदमी थे। अच्छे विद्वान भी थे। लेकिन थे बड़े भोले-भाले। दुनियादारी की बातों में बिलकुल कोरे थे। वे उस दिन से उस लड़के के लिए लड़की की खोज में दौड़-धूप करने लग गए। अब वे हर हमेशा उसके ब्याह की बात ही सोचते रहते। आखिर बहुत दिन तक चक्कर काटने के बाद एक गाँव में एक लड़की-वाला राज़ी हुआ। लेकिन उसने पहले एक बार लड़के को देखना चाहा। पण्डित जी ने उसकी बात मान ली।

लौट कर पण्डितजी ने लड़के के माँ-बाप से कह दिया कि लड़की-वाले वर को देखने आ रहे हैं। लड़के के माँ-बाप बड़ी चिंता में पड़ गए। न लड़के के अंग में कोई गहना था और न लड़के की माँ के पास कोई अच्छी साड़ी ही थी। आखिर लड़के की माँ पड़ोस के घर से अपने लिए एक अच्छी साड़ी और

कुमुदिनी देवी

लड़के के लिए एक सोने का हार माँग ले आई। ऐसे शुभ काम में कौन नहीं मदद करता ! उसने खुद नई साड़ी पहनी और लड़के को सोने का हार पहिना दिया। फिर सज-धज के साथ लड़की-वालों की राह देखने लगी। ठीक समय पर लड़की-वाले आए। आदर-सत्कार के बाद वे आसन पर बैठे और बोले—"यही लड़का है ?" पण्डित जी ने तुरंत जवाब दिया—"हाँ, लड़का तो यही है। लेकिन एक बात सुन लीजिए। यह सोने का हार लड़के का नहीं है।" यह सुनते ही लड़की-वाले समझ गए कि लड़का बहुत ग़रीब है और यह सोने का हार कहीं से माँग लाया है। उन्होंने नम्रता के साथ कहा कि वे घर जाकर खबर देंगे। ऐसा कह कर वे चलते बने।

बहुत दिन बीत गए। पर लड़की-वालों के यहाँ से कोई खबर न आई। लोगों ने कहा कि यह सब पण्डित जी का दोष है। अगर उन्होंने सोने के हार की बात न खोली होती तो शादी ज़रूर हो जाती। पण्डित जी को भी अब अपनी गलती मालूम हो गई।

बड़ी मेहनत से ढूँढ-ढाँढ कर उन्होंने फिर एक जगह बात ठीक की। फिर वे लोग लड़का देखने आए। पण्डित जी ने सोचा कि पिछली बार सच बोलने से काम बिगड़ गया था। इसलिए इस बार झूठ बोलना चाहिए। उन्होंने लड़की-वालों से कहा—'देख लीजिए! यही लड़का है और इसके गले में सोने का हार भी इसी का है।' यह सुनते ही लड़की वालों के मन में शक पैदा हो गया। उन्होंने कहा—"अच्छा, घर जाकर हम आपको अपना निश्चय बता देंगे।" यह कह कर वे अपनी राह गए। लेकिन अब उनके यहाँ से भी कोई खबर न आई तो पण्डित जी को फिर फटकार सुननी पड़ी। बेचारे को यह जान कर बड़ा दुख हुआ कि उन्हीं की बातों

ने इस बार भी बना-बनाया खेल बिगाड़ दिया। इसलिए उन्होंने सोचा—"यह तो बड़ा बुरा हुआ। मालूम होता है, ऐसे अवसरों पर न झूठ बोलने से काम चलता है और न सच बोलने से। इसलिए इस बार ऐसी बात करूँगा जो न झूठ हो और न सच। देखूँगा, इस बार कैसे नहीं काम बनता है!" फिर उन्होंने लड़के के माँ-बाप के पास जा कर कहा—"कुछ चिंता न करो। इस बार मैं ऐसी कोई बात न करूँगा जिससे काम बिगड़ जाय।" यह सुन कर उन्हें भी कुछ भरोसा हुआ।

पण्डित जी ने फिर एक जगह बात पक्की की। लड़की-वाले फिर लड़के को देखने आए। उनकी खूब खातिरदारी हुई। जब सब लोग आसनों पर बैठ गए तो पण्डित जी ने लड़के को दिखा कर कहा—"देखिए! यही लड़का है। ऐसा भला लड़का आपको कहीं न मिलेगा। लेकिन सुनिए—उसके गले में जो सोने का हार है, उसके बारे में न तो आप का पूछना ही उचित है और न मेरा जवाब देना ही।" उनकी बात सुन कर लड़की-वालों ने समझा कि ज़रूर दाल में कुछ काला है। इसलिए उन्होंने कहा—'अच्छा, हम घर जाकर आपको अपने निर्णय की सूचना देंगे।' ऐसा कह कर वे भी चले गए।

उनके चले जाने के बाद गाँव-वालों ने पण्डित जी को खूब आड़े हाथ लिया। लड़के के ग़रीब माँ-बाप बहुत दुखी हुए। आखिर उन्होंने यह कह कर पण्डित जी से पिंड छुड़ा लिया—'पण्डित जी! आपको सैकड़ों प्रणाम! आपने जो कुछ किया वही काफ़ी है। अब आप कोई कष्ट न कीजिए। लड़के के भाग्य में जैसा लिखा है, होगा।'

सैकड़ों बरस पहले की बात है। धारानगर में धरमू नाम का एक चमार रहता था। अपने भाई-बंधुओं की तरह वह भी जूते बना कर अपनी रोज़ी चलाता था। वह उस गाँव की चौकीदारी का काम भी करता था। वह रात रात भर जग कर पहरा देता और सारे शहर में गश्त लगाता। रह रह कर चिल्ला उठता—'होशियार! जागते रहो!'

इस तरह उसके दिन सुख से जा रहे थे। लेकिन उसे एक चिन्ता थी। उसके कोई बाल-बच्चे न थे।

उसी शहर में एक पंडित जी रहते थे। जब धरमू रात भर पहरा देकर घर लौटता तभी पण्डित जी नहाने के लिए नदी पहुँचते थे। इस तरह दोनों में रोज़ भेंट हो जाती थी।

एक दिन धरमू ने पण्डित जी को पालागन करके कहा—'पण्डित जी! ऐसा अशीर्वाद दीजिए, जिससे मेरे एक सन्तान हो।'

यह सुन कर पण्डित जी ने उससे कहा—"धरमू! क्यों बेकार सन्तान की चिन्ता करते हो? वे तो—'ऋणानुबन्ध रूपेण पशु, पत्नी, सुतालया:।' याने पशु, स्त्री, बाल-बच्चे, घर-बार सभी पहले जन्मों का कर्ज़ा चुकाने आते हैं और कर्ज़ा चुकते ही चले जाते हैं।" यह कह कर पण्डित जी नहाने चले गए।

पण्डित जी के उपदेश से धरमू का मोह तो नहीं मिटा; उल्टे एक उपाय सूझ गया। उसने सोचा—"अगर कोई मेरा माल खा ले और बदले में मैं कुछ नहीं लूँ, तो वह मेरा ऋणी बन जाएगा। तब तो अगले जन्म

रामचन्द्र वर्मा

में उसे मेरे घर पैदा होकर मेरा कर्ज़ा चुकाना पड़ेगा। यह तो अच्छा उपाय सूझा।" यह सोच कर धरमू मन ही मन बहुत खुश हुआ।

इसी ख़्याल से अब धरमू जूते बना कर हर किसी को मुफ़्त में देना चाहता था। लेकिन लोग कहते—"हमें क्या पड़ी है जो मुफ़्त का माल लेकर तुम्हारे कर्ज़दार बनें! बिना पैसा दिए जूते हम नहीं ले सकते।" ऐसा कह कर वे किसी दूसरे के यहाँ जूते खरीदने चले जाते थे।

कुछ दिन बाद जब धरमू ने देखा कि इससे कोई फ़ायदा नहीं हुआ तो उसने एक और उपाय किया।

उसने मन ही मन इस तरह सोचा—"हमारे शहर से नदी एक कोस दूर है। बीच में बालू का मैदान है। मैं एक जोड़ा जूता बना कर बीच मैदान में रख आऊँगा। बहुत से लोग नंगे पाँव आते-जाते रहते हैं। जब पैर जलेंगे तो कोई न कोई मेरे जूते पहन ही लेगा। इस तरह मेरा माल खाकर वह मेरा कर्ज़दार बन जाएगा।" यह सोच कर उसने एक जोड़ा बढ़िया जूते बनाए और मैदान में रख आया। शाम तक उसने बड़ी बेचैनी के साथ समय बिताया। लेकिन शाम को जब उसने फिर मैदान में जाकर देखा तो जूतों का जोड़ा जहाँ का तहाँ पड़ा था।

इस तरह दो-तीन दिन तक वह रोज शाम को जाकर देखता कि किसी ने जूतों का जोड़ा उठा लिया कि नहीं। लेकिन उसे बार-बार निराश होकर ही लौटना पड़ता था।

आख़िर वह हिम्मत हार कर सोचने लगा कि शायद इस जन्म में उसे सन्तान का सुख बदा नहीं है।

लेकिन जब एक रोज़ शाम को उसने जाकर देखा तो जूते गायब थे। अब धरमू की खुशी का ठिकाना न रहा। उसने सोचा कि आज मेरा नसीब खुला। तुरन्त उसने दौड़ते हुए घर जाकर अपनी औरत से यह खुश-ख़बरी कही। उसे भी बहुत खुशी हुई।

लेकिन उनको यह नहीं मालूम था कि जूते किसने उठा लिए और न वे यह जानना ही चाहते थे।

एक दिन उन्हीं पण्डित जी को, जिन्होंने धरमू को उपदेश दिया था, किसी काम से पड़ोस के एक गाँव में जाना पड़ा। जब तक वे लौट पड़े तो दोपहर हो चुकी थी। पण्डित जी नंगे पाँव थे और जलती रेत में उनके पैर झुलस रहे थे। तलवों में फफोले पड़ने लगे थे। इतने में उन्हें राह में जूतों का एक जोड़ा दिखाई दिया। उन्होंने इसे भगवान की कृपा समझ कर जूते पहन लिए। फिर उन्होंने चारों ओर नज़र दौड़ाई कि शायद जूतों का मालिक कहीं दीख पड़े। लेकिन जब कोई नहीं दिखाई दिया, तो उन्होंने सोचा कि शहर में जाकर पूछ-ताछ करूँगा और जिसका यह जोड़ा होगा उसे दाम चुका दूँगा। यह सोच कर जूता पहने घर चले गए।
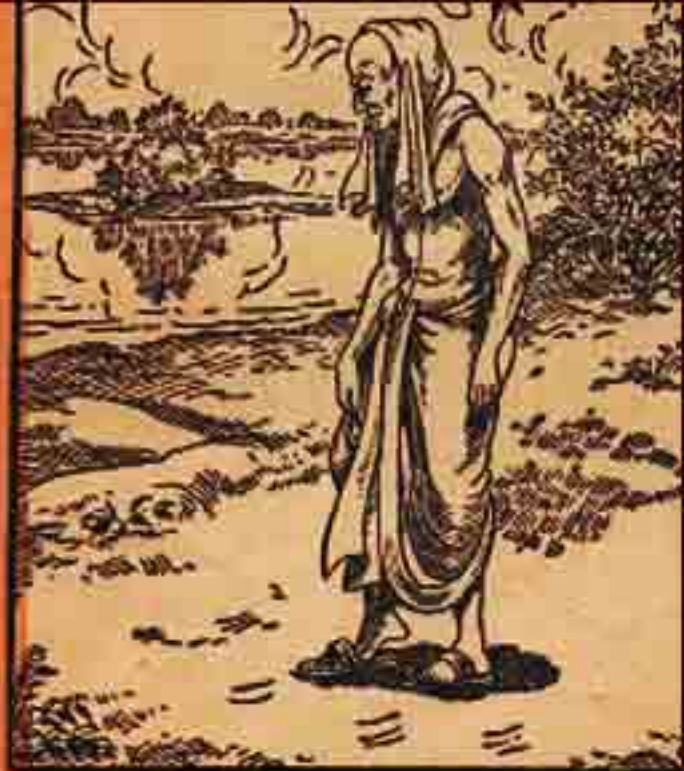
शाम को उन्होंने शहर के सभी चमारों से पूछ-ताछ की। लेकिन किसी को इसकी ख़बर न थी। जब पण्डित जी ने धरमू से पूछा तो उसने भी साफ़ इन्कार कर दिया।

देवदत्त जब सयाना हुआ तो वह भी जूते बनाने लगा। लेकिन वह जो कमाता उसमें उसका बाप एक पाई भी न छूता था। उस को मालूम था कि अगर वह बेटे की कमाई में हाथ लगाएगा तो उसका कर्ज़ा चुक जाएगा। तब बेटा उसका नहीं रहेगा। इसलिए उसने अपनी औरत को भी चेता दिया था—"ख़बरदार! देवदत्त के हाथ से तुम एक कौड़ी भी न लेना!"

देवदत्त को भी अपने पिछले जन्म का हाल मालूम था। उसे यह भी मालूम था कि क्यों उसे धरमू के घर जन्म लेना पड़ा है। इसीलिए उस जूते के जोड़े का दाम चुका कर वह किसी न किसी तरह उऋण होना चाहता था। पर उसके माँ-बाप उसकी कमाई में से एक पाई भी नहीं लेते थे। इसलिए जितनी जल्दी वह चाहता था, उतनी जल्दी उसे छुटकारा नहीं मिला।

पण्डित जी ने बड़ी कोशिश की कि जूतों के मालिक का पता लगा लें और उसे दाम चुका दें। पर उनकी सारी कोशिशें बेकार हुईं। अब पण्डित जी इसी चिन्ता में घुलने लगे। कुछ ही दिनों बाद वे बीमार पड़े और चल बसे। उन्हें उन जूतों का ऋण चुकाने के लिए धरमू के घर जन्म लेना पड़ा।

धरमू की स्त्री की कोख से एक चाँद-सा बच्चा पैदा हुआ। उसे देख कर चमार-टोली के सभी लोग अचरज में आ गए। धरमू ने बड़े प्यार से उसका नाम रखा देवदत्त।

* * *

एक दिन धरमू को किसी काम पर गाँव से बाहर जाना पड़ा। इसलिए उसने जाते समय अपने बेटे को बुला कर कहा—'बेटा!

मैं एक ज़रूरी काम से बाहर जा रहा हूँ। इसलिए आज रात मेरे बदले तुम्हीं पहरा दे देना।"

रात को देवदत्त अपने पिता की आज्ञा के अनुसार शहर में पहरा देने गया। वह अपने एक दोस्त को भी साथ लेता गया जिससे समय आसानी से कट जाए। दोनों शहर में गली-गली घूम कर पहरा देने लगे। जब एक पहर रात बीत गई, तब देवदत्त के दोस्त ने उससे कहा—"भई! पहर रात बीत गई। अब एक बार हाँक लगाओ जिससे लोगों को मालूम हो कि तुम सो नहीं रहे हो।"

तब देवदत्त ऊँचे स्वर से यह श्लोक पढ़ने लगा:—

'माता नास्ति, पिता नास्ति,
नास्ति बंधु सहोदरः।
अर्थम् नास्ति, गृहम् नास्ति,
तस्मात् जाग्रत! जाग्रत!'

श्लोक सुन कर उसका दोस्त अचम्भे में पड़ गया और बोला—"भाई, इस मन्तर का माने क्या है?"

देवदत्त ने कहा—"अरे भई! यह भी समझ न सके! सुनो—माता-पिता, बंधु-बान्धव, धन-दौलत और घर-बार कुछ भी अपने नहीं हैं। यह सब माया का खेल है। इसलिए होशियार रहो। यही इस श्लोक का मतलब है।"

इतने में दूसरा पहर लगा। तब देवदत्त ने यह श्लोक पढ़ा:—

'काम क्रोधश्च लोभश्च
देहे तिष्ठंति तस्कराः
ज्ञानरत्नापहाराय,
तस्मात्, जाग्रत! जाग्रत!'

फिर दोस्त के पूछने पर उसने इस श्लोक का माने बताया—"काम, क्रोध और लोभ रूपी चोर इस देह में छिप कर, ज्ञान रूपी रत्न को चुरा ले जाने के लिए ताक में बैठे हैं। इसलिए सावधान रहो।"

यह सुन कर उसके दोस्त को बड़ा अचरज हुआ और उसने कहा—"भाई! तुम्हारी बातें सुन कर तो मेरे अचरज का ठिकाना नहीं रहा। आज तक मैंने माल-असबाब और रुपया-पैसा चुरा ले जाने वाले चोरों का ही हाल सुना था। लेकिन ज्ञान रूपी रत्न चुरा ले जाने वाले इन निराले चोरों का नाम तो मैंने कभी नहीं सुना था। न जाने, तुमने यह सब कहाँ से सीखा है!"

इतने में तीसरा पहर हुआ और देवदत्त ने तीसरा श्लोक पढ़ा :—

'जन्मदुःखम्, जरादुःखम्,
जायादुःखम् पुनः पुनः।
संसार-सागरं दुःखम्,
तस्मात् जाग्रत! जाग्रत!'

दोस्त के पूछने पर उसने इस श्लोक का अर्थ बताया—'जन्म लेने में दुख है, बुढ़ापे में दुख है और स्त्री के साथ घर-गिरस्ती चलाने में दुख है। यह संसार ही दुखों का सागर है। इसलिए होशियार!'

यह सुन कर उसके साथी ने कहा—"अरे! उधर तुम्हारा बाप तो जल्दी से जल्दी तुम्हारी शादी करने की कोशिश में लगा है। इधर तुम वेदान्त बघार रहे हो! यह तो खूब रही!"

इसका देवदत्त ने कुछ जवाब नहीं दिया; सिर्फ़ मुस्कुराया। इतने में चौथा पहर हो चला।

तब देवदत्त ने यह श्लोक पढ़ा :—

'आशया बध्यते लोके
कर्मणा बहुचिंतया,
आयुक्षीणम् न जानाति,
तस्मात् जाग्रत ! जाग्रत !'

यह श्लोक सुन कर उसका दोस्त मुँह बाए खड़ा रह गया। वह क्या जाने कि देवदत्त इतना बड़ा विद्वान कब से बन गया ! वह तो उसे एक मामूली चमार ही समझता था। तब उसने इस चौथे श्लोक का अर्थ पूछा।

देवदत्त ने बताया—"आशा, चिंता, और कर्म, इन तीनों से संसार बँध जाता है। इनमें फँस कर लोग यह भी नहीं जानने पाते कि दिन-दिन उनकी आयु नष्ट हो रही है। इसलिए मैं लोगों को चेता रहा हूँ कि सावधान ! इनके जाल में न फँसना। यही है इसका अर्थ।"

उस शहर के राजा को उस रात अच्छी तरह नींद न आई थी। उसने करवटें बदलते हुए देवदत्त के चारों श्लोक सुने। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

उस ने मन ही मन सोचा—'यह कैसा चौकीदार है ! यह तो बड़े-बड़े पण्डितों के भी कान काटता है।' इसलिए सवेरा होते ही उसने अपने सिपाहियों को हुकुम दिया—"जाओ, उस पहरेदार को जिसने कल रात को यहाँ पहरा दिया था बुला लाओ !" सिपाही लोग देवदत्त को बुला कर राजा के पास ले आए।

उसे देखते ही राजा ने उसे प्रणाम करके कहा—"तुम कोई मामूली पहरेदार नहीं हो। तुम्हारे जैसा पण्डित तो मेरे राज भर में नहीं है।

तुम कृपा करके मेरी यह तुच्छ भेंट लो और मुझे आशीर्वाद दो।" यह कह कर उसने देवदत्त को अशर्फियों की एक थैली देकर विदा किया।

पहले तो देवदत्त ने सोचा कि वह थैली लेने से इन्कार कर दे। लेकिन कुछ सोचने-विचारने के बाद उसने थैली ले ली। उसके मन में यह ख्याल हुआ कि शायद इससे पिता का कर्ज़ा चुकाने में कोई मदद मिले?

दूसरे दिन धरमू गाँव से लौटा। देवदत्त सोचने लगा कि किस उपाय से थैली पिता को दे! उसे यह अच्छी तरह मालूम था कि उसके हाथ से धरमू कोई चीज़ नहीं लेगा। उसे कोई सूरत नज़र नहीं आ रही थी। इतने में चमार-टोली में आग लग गई। सब लोग अपने घरों से माल-असबाब निकालने लग गए। देवदत्त भी अपने घर से माल-असबाब निकालने लगा। धरमू उन चीजों को उठा-उठा कर दूर रख आता था।

इसी गड़बड़ी में देवदत्त ने वह थैली जो राजा ने दी थी, पिता के हाथ में डाल दी। जल्दी में धरमू का भी ध्यान उस थैली की ओर नहीं गया। उसने सोचा कि वह भी घर की कोई चीज़ है। इसलिए बिना सोचे-समझे उसे हाथ में ले लिया और थोड़ी दूर पर असबाब के साथ रख आया।

ज्यों ही धरमू ने वह थैली ली, देवदत्त का कर्ज़ा चुक गया। अग्नि-देव ने उसे अपनी गोद में छिपा लिया।

धरमू चिल्ला कर दौड़ा। पर उस थैली को देख कर ठिठक गया---'ओह! मेरा कर्ज़ तो उसने चुका दिया!' उसके मुँह से सिर्फ़ इतना ही निकला।

वह हाथ मलता खड़ा रह गया।
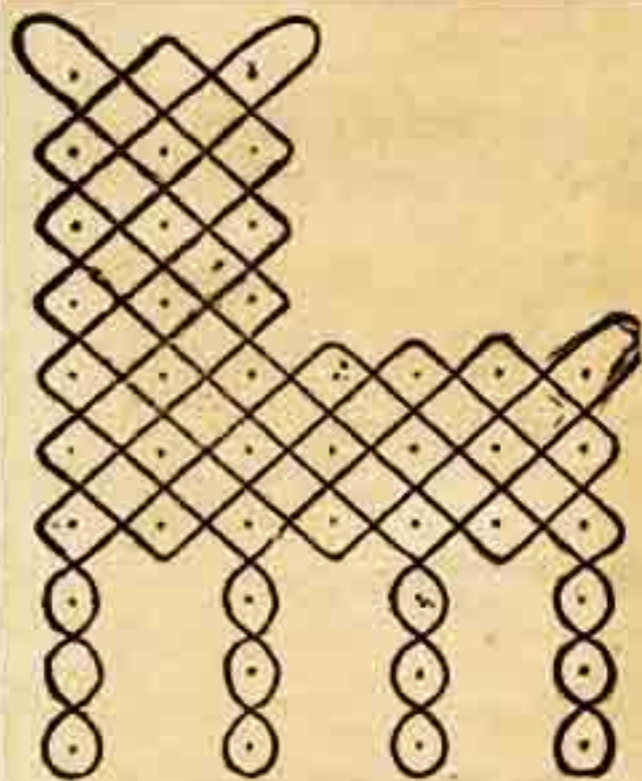
लक्ष्मी देवी
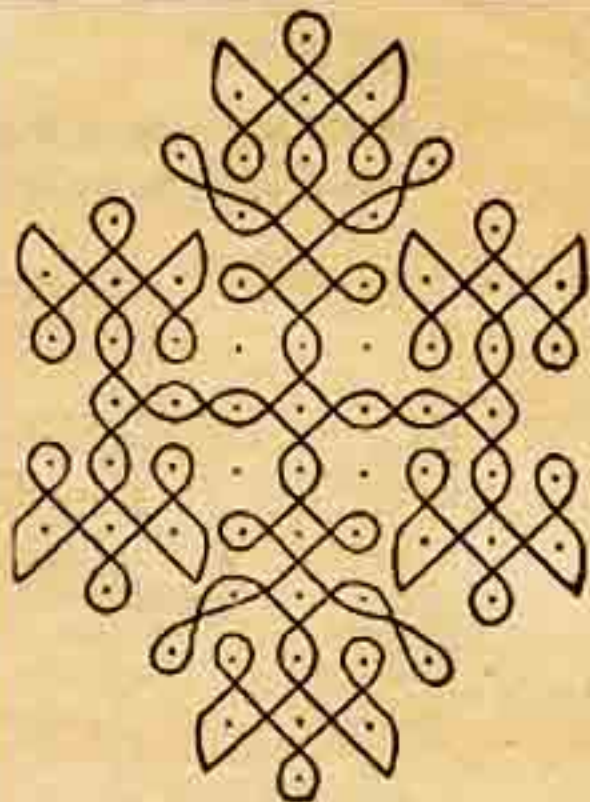
वत्सला बाई
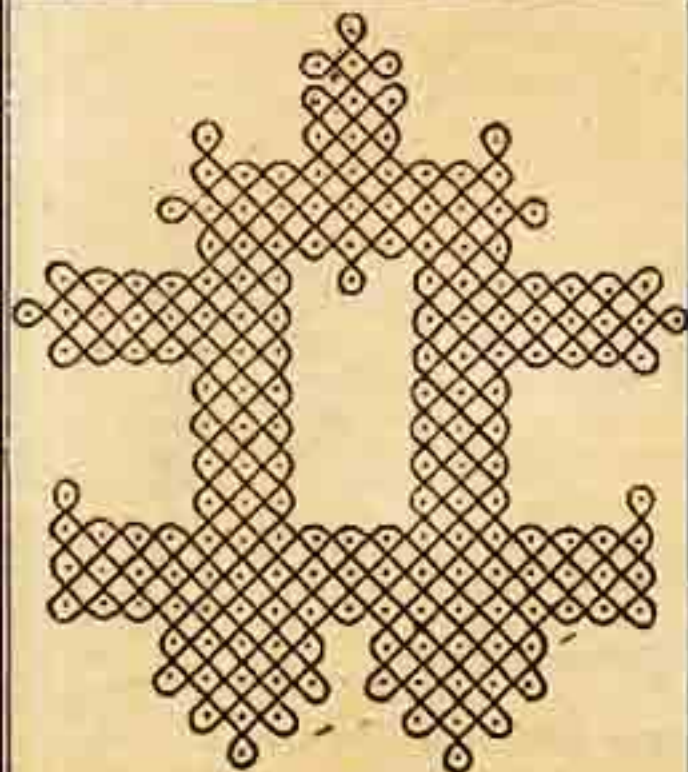
कुमारी हेमलता
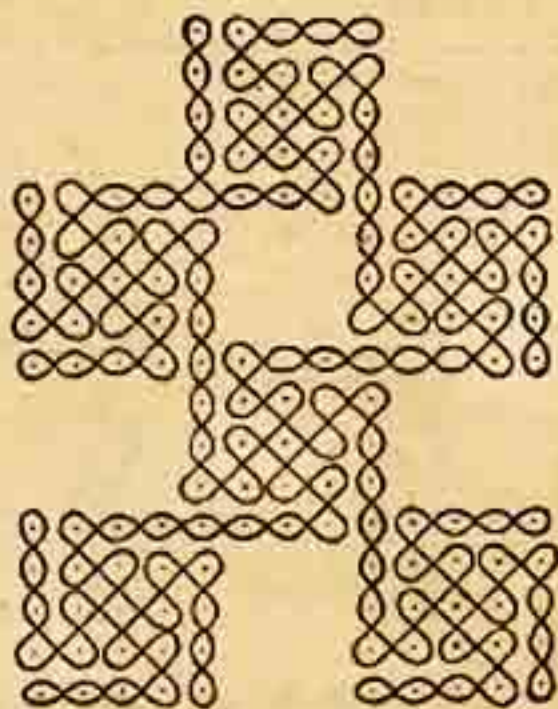
ममता देवी

पिछली बार बगुले ने बन्दर को धोखा दिया था। इसलिए बन्दर ने सोचा कि इस बार बगुले को जरूर छकाना चाहिए।

बन्दर कहीं से एक ढोल ले आया। थोड़ी देर तक नीचे रख कर बजाने के बाद उसने बगुले से भी उसी तरह करने को कहा।
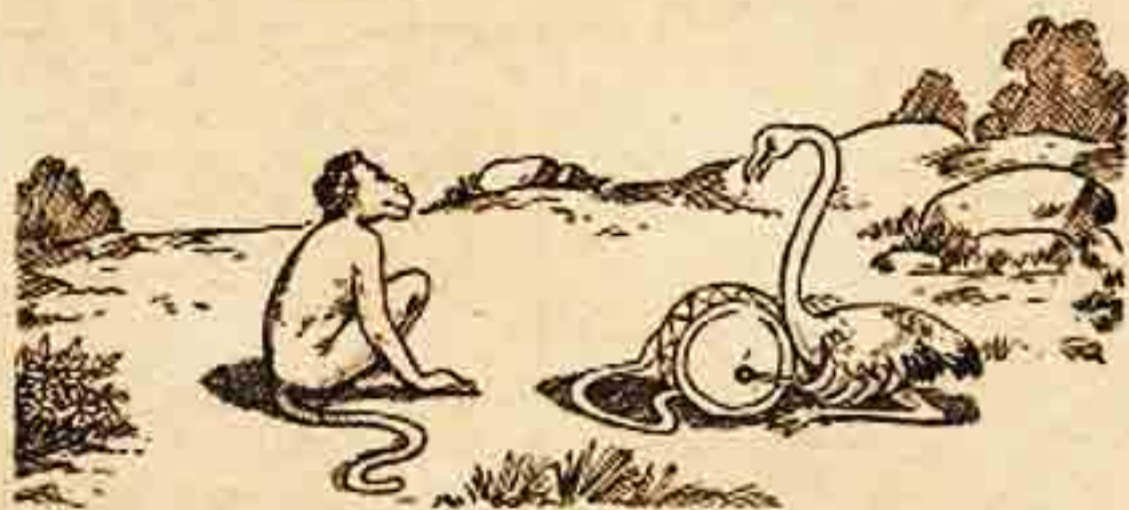
बगुले ने भी नीचे बैठ कर बड़ी आसानी से ढोल बजाया।

फिर बन्दर ने ढोल गले से लटका कर थोड़ी देर तक बजाया।

बगुले ने भी उसी तरह करना चाहा। लेकिन उसकी पतली गरदन मरोड़ खा गई और वह दर्द के मारे चीखने लगा।

बच्चों की आदतों के माफ़िक ही उनका चाल-चलन भी बनता है। जिस वातावरण में बच्चा पलता है उसकी वैसी ही आदतें पड़ जाती हैं। इसलिए बच्चों के चाल-चलन की जिम्मेदारी माँ-बाप पर है।

बच्चों में हरेक चीज़ की नक़ल करने की प्रवृत्ति रहती है। वे बड़ों को जैसा करते देखते हैं वैसा ही सीख जाते हैं। इसलिए बच्चों के सामने बड़ों को बहुत सावधान रहना चाहिए। ऐसा न हो कि उनकी सारी गन्दी आदतें बच्चे भी सीख लें।

अक़्सर बड़े लोग कोई गन्दा काम करके अपने मन को समझा लेते हैं कि बच्चे ने नहीं देखा। उसका ध्यान किसी दूसरी तरफ़ था। लेकिन यह उनकी भूल है। बच्चे बड़ी आसानी से ऐसी बातें ताड़ जाते हैं। बड़ों की अनुपस्थिति में स्वच्छन्द होकर वे उनकी नक़ल भी करते हैं।

बच्चों के कच्चे मन पर जो छाप पड़ जाती है वह कभी नहीं मिटती। बड़े होने पर उनके चरित्र-गठन में उसका प्रभाव स्पष्ट दीख पड़ता है। माता-पिता उनसे कितना प्रेम रखते हैं, उन्हें किस नज़र से देखते हैं, यह जानने में उन्हें ज़्यादा देर नहीं लगती। बच्चे माता-पिता को अपना देवता समझते हैं। इसलिए वे उनसे देवताओं के-से व्यवहार की आशा रखते हैं। जब उनके इस विश्वास को धक्का पहुँचता है तो वे तेजी से पतन की ओर लुढ़कने लगते हैं। फिर सच्चरित्रता, सद्व्यवहार और सचाई पर उनकी आस्था नहीं रह जाती। वे आसानी से बिगड़ जाते हैं।

तुम्हारी दीदी
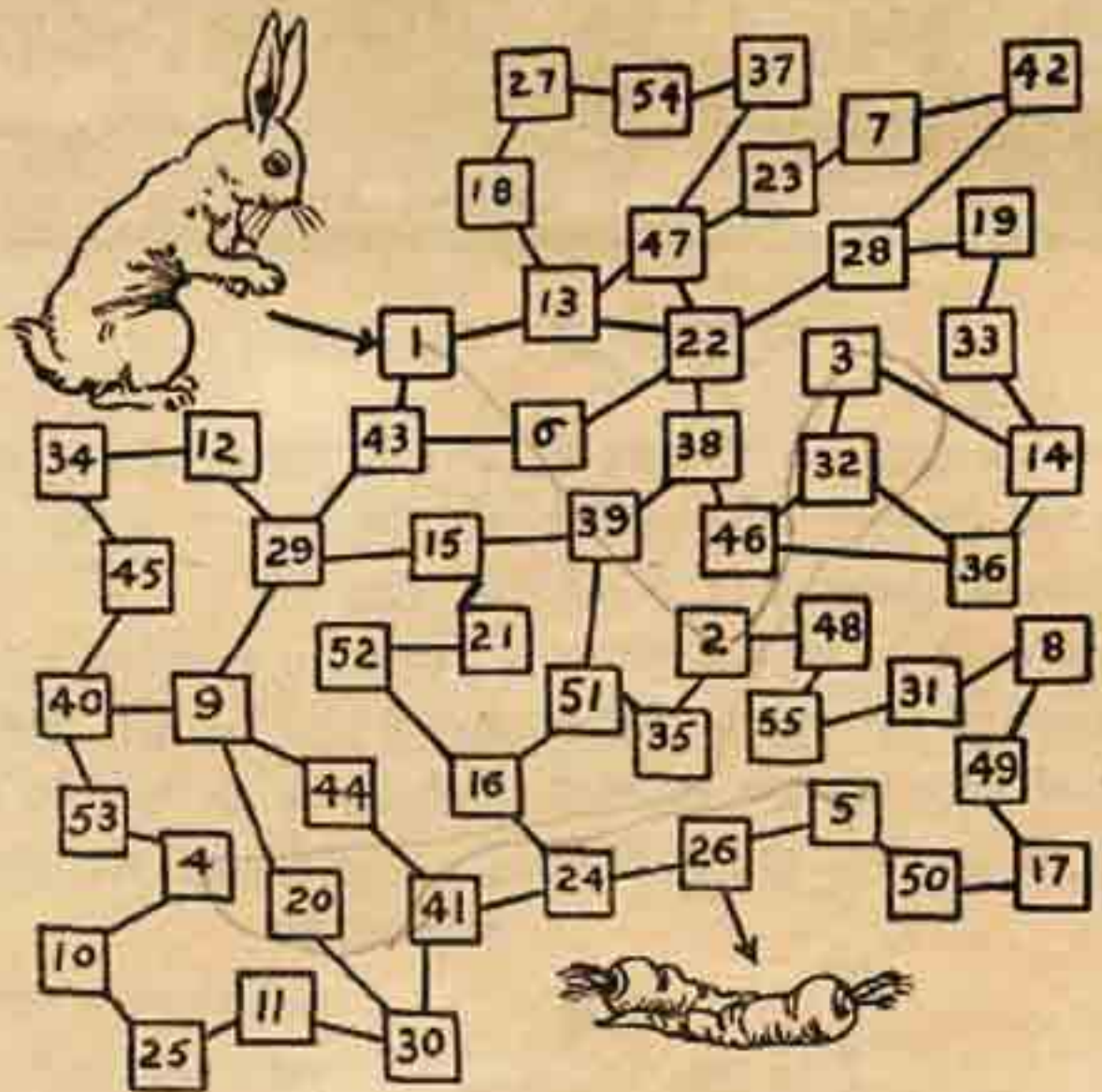
ऊपर १ से ५५ तक वर्ग हैं। एक-एक वर्ग एक-एक घर है। उन घरों में खरगोश के दोस्त रहते हैं। खरगोश १ नम्बर वाले घर में रहता है। वह अपने घर से निकल कर अपने सब दोस्तों के घर जाकर, अन्त में उस जगह जाना चाहता है, जहाँ मूलियाँ रखी हुई हैं। याद रखो कि उसे दुबारा किसी घर में नहीं जाना है और एक दोस्त को भी नहीं छोड़ना है। क्या तुम बता सकते हो कि खरगोश किस तरह उन मूलियों तक पहुँच सकता है? अगर न बता सको तो ५२-वाँ पृष्ठ देखो।

कठपुतलियों का नाच !

यह बड़ा आम तमाशा है। हिन्दुस्तान में जगह जगह रोज़ हजारों आदमी बाज़ारों में खड़े होकर यह तमाशा देखते हैं और अपना मन बहलाते हैं। कई साल पहले जब मैंने कलकत्ते की एक सड़क पर छोटी-सी भीड़ में खड़े होकर पहले-पहल यह तमाशा देखा था, तो मुझे इतनी खुशी हुई थी कि मैंने सबसे ज़्यादा तालियाँ बजाई थीं। शहरों और गाँवों में बाज़ारू बाजीगर दिन-दहाड़े यह तमाशा करते हैं।

हमारे देश के बाजीगर खान्दानी होते हैं। वे अपने बाप-दादों से ही बाजीगरी सीखते हैं। या यों कहिए कि वे जन्म से ही बाजीगर होते हैं। अब सुनिए कि यह तमाशा क्या है?

बाजीगर सड़क के किनारे आसन जमा कर बैठ जाता है। उसके आगे एक चटाई बिछी रहती है। उस चटाई पर तीन-चार काठ या मोम की बनी हुई पुतलियाँ पड़ी रहती हैं। उसे अपने तमाशे के लिए बहुत सी चीज़ों की ज़रूरत नहीं रहती। बाजीगर

उन पुतलियों को उठ कर नाचने का हुक्म देता है। तुरंत ये पुतलियाँ उठ कर तरह तरह से नाचना शुरू कर देती हैं। ये झूमती हुई, ताल पर क़दम धरती हैं। आपस में गले मिलती हैं। और भी कई अजीब तमाशे करती हैं। बाजीगर उनकी तरफ़ अपनी नज़र भी नहीं डालता। वह तमाशाइयों से इधर-उधर की बातें करता रहता है। लोग बेजान पुतलियों को इस तरह नाचते देख कर मुँह बाए खड़े रह जाते हैं।

पुतलियों को इस तरह नचाना कोई मुश्किल काम नहीं है। बाजीगर लोग एक काले धागे की मदद से यह काम बड़ी आसानी से कर लेते हैं। यह काला धागा इस काम के लिए ख़ास तौर पर बना रहता है। यह इतना काला और इतना महीन होता है कि आसानी से नज़र नहीं आता। हम दिन में भी दो फुट की दूरी से यह धागा नहीं देख सकते।

लेकिन हर एक बाजीगर ऐसा धागा काम में नहीं लाता। क्योंकि यह ज़रा क़ीमती होता है।

ज़्यादातर बाजीगर सिर के लंबे बालों से ही काम चला लेते हैं। इस काले धागे या बाल से पुतलियों को गूथ कर, इस धागे का एक सिरा मोम से एक छोटी-सी पेटी में चिपका दिया जाता है। दूसरा सिरा जादूगर के पैर के अँगूठे से बँधा रहता है। उसके पैर कंबल या ओढ़नी से ढके रहते हैं। इसलिए धागे की बात कोई नहीं जान पाता। इधर बाजीगर अपने पैर का अँगूठा हिलाता है। उधर पुतलियाँ मानों इशारे पर नाचने लगती हैं। यह तमाशा करने के लिए सिर्फ़ थोड़ी हाथ की सफ़ाई चाहिए। हमारे देश के बाजीगर ऐसे तमाशे बड़ी आसानी से कर लेते हैं।

[अगर कोई इस सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार करना चाहें तो सीधे प्रोफेसर साहब को लिखें। प्रोफेसर साहब खुद उनके सारे सन्देह दूर करेंगे। हाँ, प्रोफेसर साहब को पत्र अंग्रेजी में ही लिखा जाए। यह ध्यान में रहे। प्रोफेसर साहब का पता :—

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मैजीशियन
पो. बा. ७८७८ कलकत्ता १२]
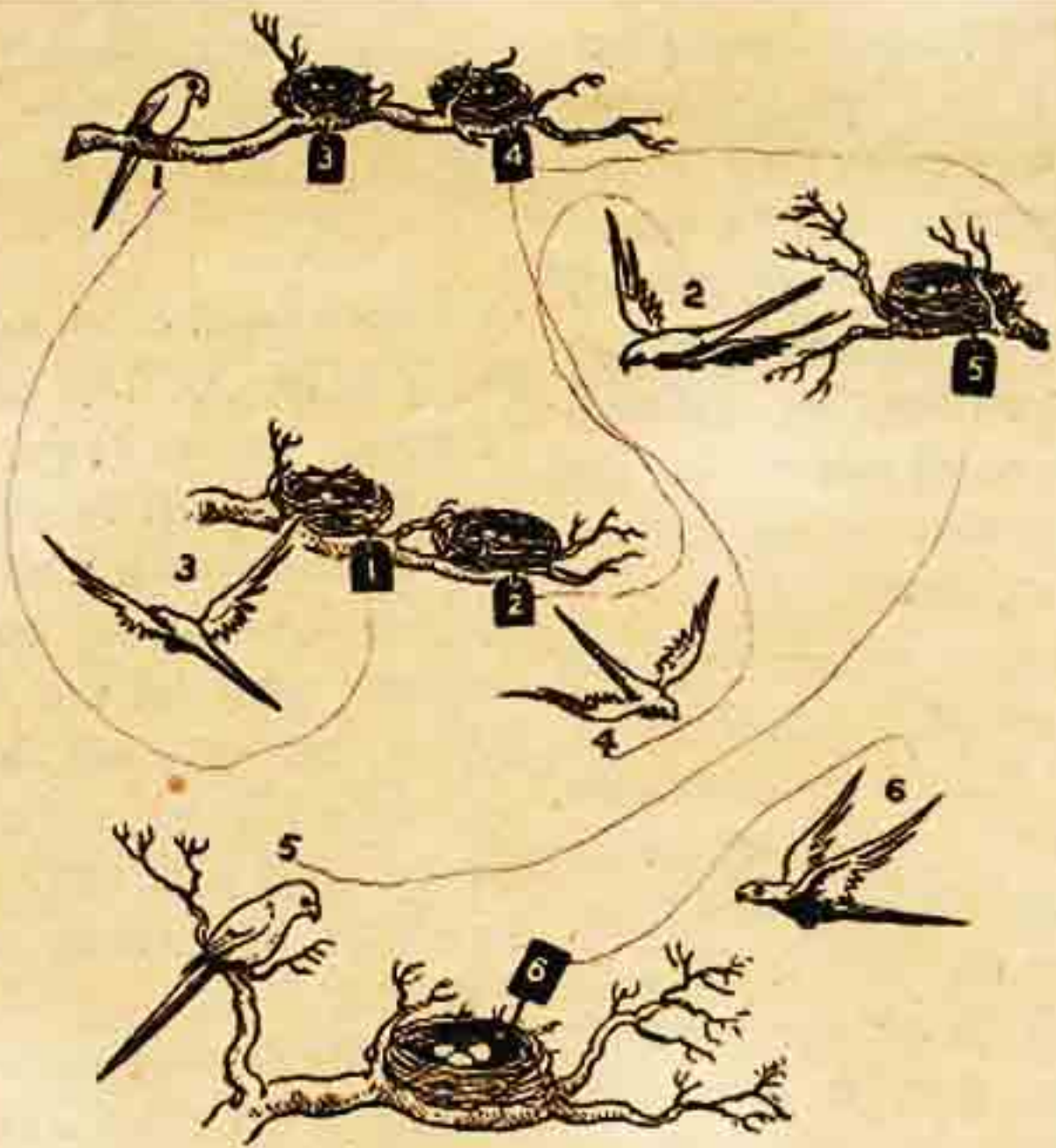
यहाँ छः तोते और उनके लिए छः घोंसले दिखाई देते हैं। है न? अब १ संख्या वाले तोते को उसी संख्या वाले घोंसले में जाना है। २ संख्या वाले तोते को भी २ संख्या वाले घोंसले में। इसी तरह अन्य तोतों को भी अपनी-अपनी संख्या वाले घोंसलों में पहुँचना है। क्या तुम पेन्सिल से लकीर खींच कर उनको राह बता सकते हो? लेकिन याद रखो—कोई भी लकीर दूसरी लकीर से छू न जाए और न वह किसी तोते या घोंसले को ही स्पर्श करे! अगर तुमसे यह न हो सके तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

संकेत

बाएँ से दाएँ

१. मजाक

२. कृपण

५. विचित्र

७. उपवास

८. जिद्

१०. धनवान

१३. चेतावनी

१४. रोगी

ऊपर से नीचे

१. कए

३. नदी

४. मूर्ख

५. व्यर्थ

६. तर्क

९. स्नेह

११. मुसलमानों का त्यौहार

१२. स्वभाव

४९-वें पृष्ठ वाले खरगोश के चित्र का जवाब :

खरगोश को अपने घर से निकल कर इस राह से दोस्तों के घर जाना चाहिए :

1, 13, 18, 27, 54, 37, 47, 23, 7, 42, 28, 19, 33, 14,
3, 32, 36, 46, 38, 22, 6, 43, 29, 12, 34, 45, 40, 53,
4, 10, 25, 11, 30, 20, 9, 44, 41, 24, 16, 52, 21, 15,
39, 51, 35, 2, 48, 55, 31, 8, 49, 17, 50, 5, 26.

जिद्दी संख्या

142857—यह संख्या बड़ी जिद्दी है। इसको तुम अगर 2 से गुना करो तो जवाब में वे ही अंक स्थान बदल कर आजायेंगे। 3 से, 4 से, 5 से, 6 से गुना करो तो भी वही हाल होगा। लेकिन अगर तुम 7 से गुना करो तो इसकी सारी जिद दूर हो जाएगी। फिर भी उस जवाब में एक विशेषता होगी। उसमें सभी 9 ही होंगे।

$$142857 \times 2 = 285714$$
$$\times 3 = 428571$$
$$\times 4 = 571428$$
$$\times 5 = 714285$$
$$\times 6 = 857142$$
$$\times 7 = 999999$$

यह हिसाब करो!

एक बड़ा किला है। उसकी दस दीवारें हैं और हरेक दीवार में फाटक हैं। वे फाटक इस तरह बने हुए हैं :—

पहली दीवार में एक ही फाटक है।
दूसरी दीवार में दो फाटक हैं।
तीसरी दीवार में तीन फाटक हैं।
चौथी दीवार में चार फाटक हैं।
पांचवीं दीवार में पांच फाटक हैं।
छठी दीवार में छः फाटक हैं।
सातवीं दीवार में सात फाटक हैं।
आठवीं दीवार में आठ फाटक हैं।
नवीं दीवार में नौ फाटक हैं।
दसवीं दीवार में दस फाटक हैं।

किले के बीच के मैदान में बहुत से हाथी हैं। एक बड़ी झील में पानी पीने के लिए उन्हें किले के बाहर जाना है। सभी हाथी झुण्डों में बँट जाते हैं और जो जिस संख्या की दीवार है उसके फाटकों में से उतने ही झुण्ड बनाकर हाथी बाहर जाते हैं। जैसे पहली दीवार के फाटक में से हाथी एक ही झुण्ड में बाहर जाते हैं। इसके माने है।

दूसरी दिवार के दो फाटकों में से हाथी दो समान झुण्डों में बँटकर बाहर जाएँगे।
तीसरी दिवार के तीन फाटकों में से हाथी तीन समान झुण्डों में बँटकर बाहर जाएँगे।
चौथी दिवार के चार फाटकों में से हाथी चार समान झुण्डों में बँटकर बाहर जाएँगे।
इसी तरह अन्य फाटकों में भी। दसवीं दीवार के दस फाटकों में वे दस समान झुण्डों में बँटकर बाहर जाएँगे।
अब बताओ कि किले में कुल कितने हाथी हैं? अगर न बता सको, जवाब ५९-वें पृष्ठ में देखो।
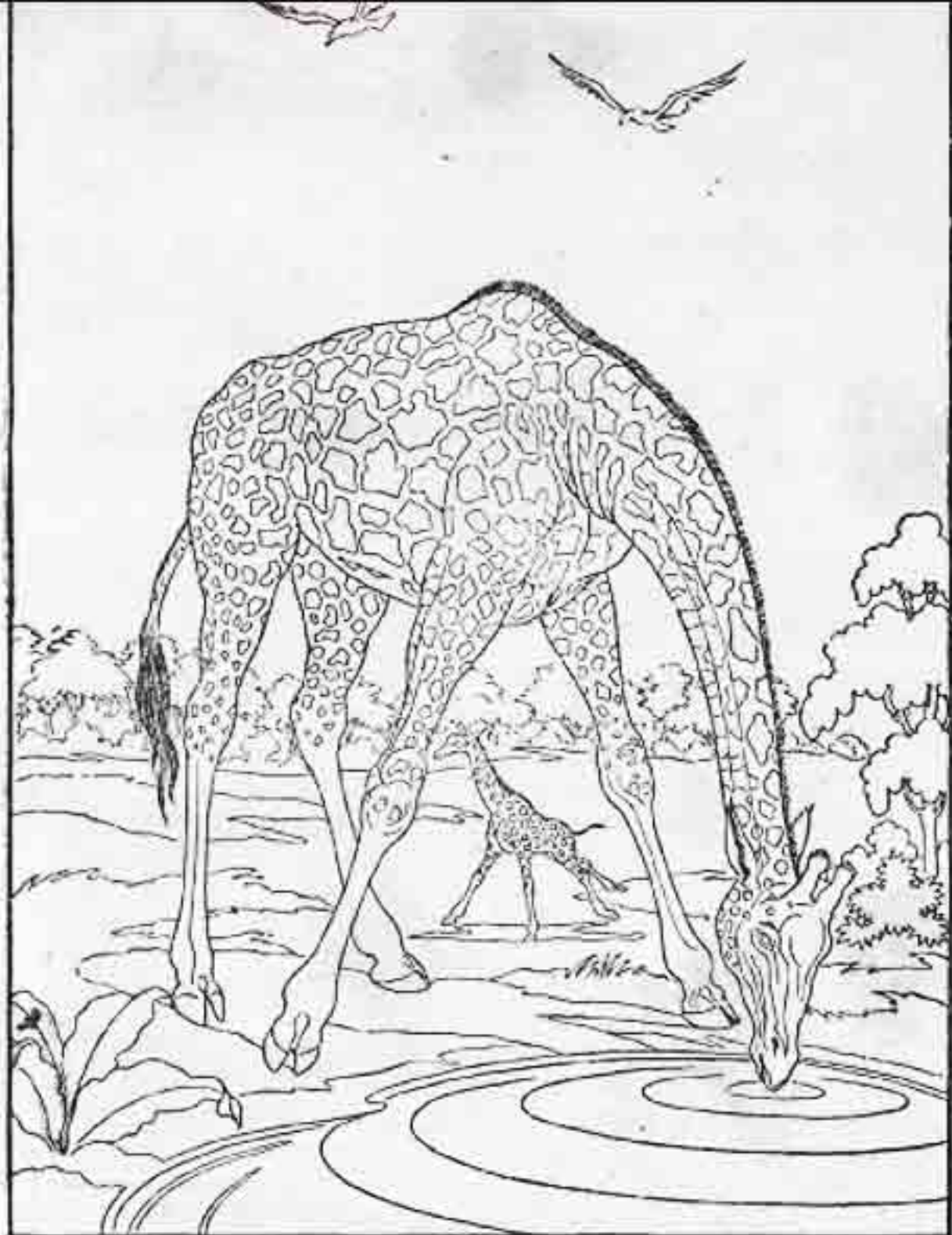
पिछली बार तुम ने हंसों को रंग लिया होगा। इस बार सोचो कि जिराफ़ी को किन रंगों से रंगना चाहिए। इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उसका मिलान करके देख लेना।

ऊपर के चित्र में साँप अपनी बाँबी से निकल कर भटकता हुआ बहुत दूर आ गया है। बेचारा राह भूल गया है। इसलिए लौट कर जा नहीं सकता। क्या आप उसको राह बता सकते हैं?

५२-वें पृष्ठ के तोतों वाले चित्र का जवाब :

पहेली का उत्तर

1 दि	ल्ल	गी		2 कं	जू	3 स
क़			4 मू			रि
त		5 बे	ढ़	6 ब		ता
	7 फाँ	का		8 ह	ठ	
9 म		10 र	11 ई	स		12 मि
म			द			जा
13 ता	की	द		14 म	री	ज़

५४-वें पृष्ठ के हिसाब का जवाब :

किले में २५२० हाथी हैं।

Controlling Editor: SRI CHAKRAPANI

Printed and Published by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press, Madras-1

Photo by R. Ranganadhan

मैं चौक पूरती हूँ !

CHANDAMAMA (Hindi) January '50 Regd. No. M. 5452

हंस - युगल